स्वस्थ चेतना का वाहक

मार्च 2026

क्रान्ति

मासिक

सहयोग राशि
30/-₹

रोज़ा या उपवास

- आदमी को इंसान बनाने का मज़बूत ज़रिया
- रमज़ान : दान, प्रतिदान और क्षमादान का महीना
- रोज़े की अवधारणा : विभिन्न धर्मों में

इस्लामिक सेंटर वेल्लूर

अपील

#19/4 Madar Saheb Street
R'N' Palyam,Vellore 632001 Tamilnadu

इस्लामिक सेंटर का विज़न और मिशन

विज़न

"एक ऐसी गरिमापूर्ण और चरित्रवान पीढ़ी का निर्माण करना हमारा विज़न है, जो एकेश्वरवाद (तौहीद) के प्रकाश और ईश-परायणता (तक़वा) के मार्गदर्शन में जीवन के हर कदम पर आगे बढ़े; जो वैश्विक मानवीय भाईचारे की इस्लामी अवधारणा को पूरे दिल से अपनाए, सभी मनुष्यों को ईश्वर की समान रचना माने, और पृथ्वी पर न्याय, शांति और दया (रहमत) के संदेश को फैलाने में अपनी प्रभावी भूमिका निभाए।"

मिशन

(1) प्रामाणिक इस्लामी ज्ञान का प्रसार: कुरान और सुन्नत की शाश्वत (eternal) शिक्षाओं के आलोक में प्रामाणिक इस्लामी ज्ञान प्रदान करना, ताकि ईमान में दृढ़ता और नैतिकता में उच्चता प्राप्त हो सके।
(2) सीरत-ए-रसूल ﷺ का अनुसरण: पैगंबर मुहम्मद ﷺ के जीवन के अनुसार भाईचारे, समानता और न्याय के ऐसे मूल्यों को विकसित करना, जो हर प्रकार के भेदभाव और अन्याय के खिलाफ एक मजबूत आवाज बनें।
(3) सेवा और करुणा का भाव: ईश्वर (अल्लाह) की समस्त रचनाओं के प्रति विनम्रता, दया और सेवा की भावना को दिलों में गहराई से स्थापित करना।
(4) विज़नरी नेतृत्व का विकास: धार्मिक अंतर्दृष्टि (Religious Insight) को नैतिक प्रशिक्षण, सामाजिक चेतना और जिम्मेदार नेतृत्व के गुणों के साथ समन्वित (harmonize) करना।
(5) इस्लाम के सच्चे राजदूत: ऐसे कर्मठ व्यक्तियों को तैयार करना जो इस्लाम के वास्तविक संदेशवाहक (Ambassadors) हों, और जिनके चरित्र से शांति, बुद्धिमत्ता (Wisdom) और मानवता के प्रति निष्ठा झलकती हो।

सरगर्मियां

इस्लामिक सेंटर वेल्लूर: विश्वास और शिक्षा का संगम:

इस्लामिक सेंटर वेल्लूर ऐतिहासिक महत्व के शहर वेल्लूर में स्थित है, जो जिला मुख्यालय चेन्नई से मात्र 130 किलोमीटर की दूरी पर है। इस केंद्र की स्थापना 1978 में हुई थी। इसका प्राथमिक उद्देश्य उन व्यक्तियों को शिक्षा और मार्गदर्शन प्रदान करना है जिन्होंने हाल ही में इस्लाम स्वीकार किया है, ताकि वे अपने ईमान (आस्था) को बेहतर ढंग से समझ सकें और उस पर दृढ़ता से चल सकें।

एक अनूठा शिक्षण केंद्र : यह केंद्र इस्लाम की ओर आने वाले नए लोगों (Reverts), पुरुषों, महिलाओं और हर आयु वर्ग के व्यक्तियों को इस्लामी शिक्षा प्रदान करने के लिए समर्पित है। यहाँ प्राथमिक शिक्षा से लेकर स्नातक (Graduate) और डिप्लोमा धारक तक, सभी कुरान का पाठ, हिफ़्ज़ (कंठस्थ करना) और इस्लाम के बुनियादी सिद्धांतों को सीखने आते हैं।

सुविधाएँ और वातावरण: केंद्र के सुंदर परिसर में निम्नलिखित सुविधाएँ उपलब्ध हैं: प्राइमरी स्कूल और मस्जिद।

हॉस्टल: पुरुषों और महिलाओं के लिए अलग-अलग आवासीय व्यवस्था। खुला मैदान: स्वस्थ जीवन के लिए खेल और व्यायाम की जगह। यहाँ का वातावरण केवल शैक्षिक ही नहीं, बल्कि इस्लामी मूल्यों को विकसित करने वाला है, जो सच्चे और नेक इंसान तैयार करता है।

निशुल्क और व्यवस्थित प्रबंधन : इस केंद्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि छात्रों की शिक्षा, आवास, यात्रा व्यय, पॉकेट मनी और चिकित्सा सुविधाओं सहित सभी जरूरतों का पूरा खर्च केंद्र उठाता है, ताकि छात्र पूरी एकाग्रता के साथ अपनी शिक्षा पर ध्यान दे सकें। यह संस्थान ट्रस्ट एक्ट के तहत संचालित है और पेशेवर ऑडिट व वार्षिक प्रशासनिक बैठकों के माध्यम से इसका प्रबंधन पूरी पारदर्शिता के साथ किया जाता है।

स्नेहपूर्ण मार्गदर्शन: पुरुषों के लिए अलग प्रवेश द्वार के साथ मस्जिद और खेल का मैदान हॉस्टल से जुड़े हुए हैं। यहाँ कम पढ़े-लिखे युवाओं से लेकर उच्च शिक्षा प्राप्त और परिपक्व आयु के व्यक्ति भी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। जनरल सेक्रेटरी और निष्ठावान शिक्षकों की देखरेख में नए मुस्लिम साथी बड़ी सहजता से इस्लामी विश्वासों को समझ रहे हैं और आत्मिक शांति प्राप्त कर रहे हैं।

हमारी अपील: सहयोग का हाथ बढ़ाएँ चूँकि संस्थान छात्रों की सभी आवश्यकताओं का वहन करता है, इसलिए हमें बड़े पैमाने पर आर्थिक सहयोग की आवश्यकता होती है। हम आपसे विनम्र निवेदन करते हैं कि अपने संभावित संसाधनों के माध्यम से इस नेक कार्य में हमारा सहयोग करें। आपका योगदान इन नए मुस्लिम भाइयों और बहनों को एक सच्चा और आदर्श जीवन जीने में मदद करेगा। हम जीवन के हर मोड़ पर आपके सहयोग और समर्थन के आकांक्षी हैं।

Cheque, DD Or Bank Transfer can be sent through bank;
UNION BANK OF INDIA, VELLORE BRANCH
A/C NO.:33300-10100-19006 IFSC CODE:UBIN0533301

Scan to pay

To make a bank transfer send an SMS to 09500190520 with the details of the amount, name, and address,

प्रधान संपादक
डॉ. फ़रहत हुसैन
kantieditorial@gmail.com

प्रबंधक
नईम ख़ान
+91 9891160829

सहयोग राशि
एक प्रति 30/- रु॰ एक वर्ष 350/- रु॰
पांच वर्ष 1500/- रु॰ आजीवन रु॰ 5000/
सऊदी अरब और खाड़ी के देशों के लिए 110/- रियाल
यूरोप व अमेरिका के लिए 40/- US डॉलर

ख़रीदार बनने, एजेंसी लेने, प्रचार-प्रसार एवं प्रबंधकीय मामलों के लिए सम्पर्क करें :

कार्यालय :
कान्ति मासिक, डी-314, दावत नगर,
अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर,
ओखला, नई दिल्ली-110025

हेल्पलाइन न॰
9818799223

Account Detail
NAME : KANTI
A/C NO : 0990839195
IFS CODE : IDIB000J029
TYPE : CURRENT
BANK : INDIAN BANK
BRANCH : JAMIA MILLIA ISLAMIA
NEW DELHI - 110025
चेक / ड्राफ़्ट 'कान्ति' के नाम से बनवाएं

प्रकाशक मुहम्मद अहमद द्वारा दावत
ट्रस्ट (रजि॰), डी-314 दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव,
जामिया नगर, नई दिल्ली-110025 से प्रकाशित एवं
Printer : Akhilesh Singh
Press : AARYA PRINTERS
201, Ground Floor, DSIDC Complex
Okhla Industrial Area phase-1,
New Delhi-110020
Editor : Shibli Arsalan

संस्था की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित है।

विचार सौरभ **डॉ. कौसर यज़दानी नदवी**

आत्म विश्लेषण

वैज्ञानिक नील्स बोर ने
अपने 77वें जन्मदिन के बाद
अपनी ज़िंदगी के बारे में
अनेक ऐसी बातें बताई हैं
जिनसे हर व्यक्ति शिक्षा ले सकता है, अगर वह शिक्षा लेना चाहे,
उन्होंने बताया कि वह अपने शिक्षक हेराल्ड हैफ़डिंग से
बहुत से मामलों में बहुत ज़्यादा प्रभावित थे।
उन्होंने अपने घर में
यूनानी देवी हेबे की मूर्ति लगा रखी थी,
जिसे देखकर हैफ़डिंग
मन ही मन में यह कहा करते थे,
'क्या देवी मेरे काम से संतुष्ट है ?'
आत्म-विश्लेषण का उनका अपना यह ढंग था।
ऐसे ही, आत्म-विश्लेषण के उद्देश्य से
अनेक सूफ़ियों, संतों, मुनियों, ऋषियों ने भी
अपने-अपने तरीक़े ईजाद कर लिए हैं, और उनका प्रचार भी किया जाता है,
लेकिन इन गढ़े हुए तौर-तरीक़ों के पीछे क्या कोई वास्तविक तर्क भी है,
या यह मात्र मन बहलावे की बात है ?
सही बात यह है कि ज्ञान का उद्गम स्रोत
तो मात्र सृष्टि का स्रष्टा है,
ज्ञान-भंडार उसी के पास है,
उसने मानवता के हित में
अपने सच्चे महान दूतों द्वारा अपने ज्ञान-स्रोत से जो मार्गदर्शन किया है,
वही प्रमाणिक है, तर्कसंगत है
मानवता का पोषक है, नैतिक मूल्यों का प्रवर्तक है,
व्यक्ति को सुधारने और समाज को बनाने का सर्वश्रेष्ठ साधन है,
जीवन को निखारने-संवारने में उसी को दृष्टि में रखना चाहिए,
आत्म-विश्लेषण के समय उसी तौर-तरीक़े को सामने रखना चाहिए।
जो ईश्वरीय मार्गदर्शन से हमें मिलता है।
जब सही मार्गदर्शन हमें मिला हुआ है,
तो इधर-उधर भटकने की क्या ज़रूरत ?
कीजिए अपना आत्म-विश्लेषण।

(प्रथम प्रकाशन : दिसम्बर 1997)

वर्ष 35 अंक 09 मार्च 2026



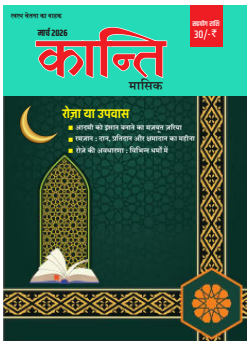

आपकी आशाओं का सुन्दर प्रतिबिम्ब

कान्ति
मासिक

इस अंक में

➢ आत्म विश्लेषण (विचार सौरभ)	– डॉ. कौसर यज़दानी नदवी	3
➢ रोज़ा या उपवास (संपादकीय)	–डॉ. फ़रहत हुसैन	5
➢ मार्गदर्शन	–संपादन प्रभाग	6
➢ अंतिम पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) सामाजिक गतिविधियां	–मुशर्रफ़ अली	9
➢ रोज़ा : आदमी को इंसान बनाने का मज़बूत ज़रिया	–मुहम्मद शकील शम्सी	13
➢ रमज़ान : दान, प्रतिदान और क्षमादान का महीना	–सुफ़ियान अहमद	17
➢ रोज़े की अवधारणा : विभिन्न धर्मों में	–डॉ. मुहम्मद इक़बाल सिद्दीक़ी	19
➢ एक ईश्वर, एक मानव, एक धर्म	–एफ़.ए. मुजीब	25
➢ समय की मांग है 'डिजिटल पैरेंटिंग'	–संपादन प्रभाग	27
➢ सूफ़ी परम्परा के "बाबा" फ़रीद और उत्तराखंड से उनका संबंध	–इस्लाम हुसैन	29
➢ संभावनाओं का देश, संकट में युवा	–जुनैद अली	33
➢ कन्नड़ में क़ुरआनी विमर्श : महिलाएं बनी बदलाव की अगुवा	–मुहम्मद तल्हा सिद्दी बापा	35
➢ सर्च सुविधा के साथ लांच हुआ 'तफ़हीमुल क़ुरआन' ऐप	– संपादन प्रभाग	36
➢ सिर्फ़ देर काफ़ी है!	–सुफ़ियान अहमद	37
➢ सुविधा की दौड़ में सुरक्षा का संकट	–संपादन प्रभाग	39
➢ भारतीय युवा और नागरिक चेतना	–नुवेरा अली	41
➢ एआई, विज्ञान और मानव बुद्धि की सीमा	–संपादन प्रभाग	43
➢ लैंगिक आधार पर हिंसा : हक़ीक़त को समझने की ज़रूरत	–डॉ. रफ़ीआ नौशीन	45
➢ विश्व घटनाचक्र	– संपादन प्रभाग	47
➢ क़ुरआन मानवता के लिए वरदान	–डॉ. फ़रहत हुसैन	50

संपादकीय



डॉ. फ़रहत हुसैन

रोज़ा या उपवास

रोज़ा या उपवास आत्मा को शुद्ध करने, ईश्वर की निकटता प्राप्त करने तथा आत्म-संयम को बढ़ाने का अनूठा अभ्यास है। इस्लाम धर्म में रमज़ान मास के रोज़े को अनिवार्य इबादत घोषित किया गया है। अन्य अवसरों पर भी स्वेच्छा से रोज़े रखने की हिदायत दी गई है। रोज़ों को फ़र्ज़ घोषित करते हुए क़ुरआन में बताया गया कि इससे तुम लोगों में ईशभय का गुण पैदा होगा। स्पष्ट है कि सभी इबादतें मनुष्य में नैतिकता और ईशभय उत्पन्न करती हैं, मगर रोज़ा इसमें विशिष्ट स्थान रखता है। रोज़े में पौ फटने से लेकर सूर्यास्त तक खाने-पीने और यौन संबंधों पर प्रतिबंध होता है। अर्थात् जिन कार्यों की अन्य दिनों में अनुमति है उन पर भी एक विशेष अवधि में रोक लगा दी गई है। कितनी ही भूख-प्यास लगे रोज़ेदार खाने-पीने से अपने-आपको रोके रखता है इस एहसास के साथ कि यह रोक अल्लाह ने लगाई है और वह सब कुछ देख रहा है।

वास्तव में बार-बार यही एहसास उसमें आत्मबल और ईशभय का गुण पैदा करता है और उसे अपार नैतिक बल प्रदान करके संयमी बनाता है। रोज़े में इंद्रियों पर कंट्रोल के साथ नैतिकता, समाज में अच्छे व्यवहार तथा ज़रूरतमंदों की मदद करना भी शामिल है जिसके परिणामस्वरूप सौहार्दपूर्ण वातावरण बनता है तथा संपूर्ण समाज में नेकियां परवान चढ़ती हैं और बुराइयां व अपराध कम होते हैं।

जिस महीने के यानी रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ किए गए उसमें सभी इंसानों के मार्गदर्शन के लिए क़ुरआन का अवतरण हुआ। इसका अर्थ यह है कि इस महीने में अल्लाह की इस कृपा पर शुक्र अदा करते हुए क़ुरआन से अधिक-से-अधिक मार्गदर्शन प्राप्त करना चाहिए, उसकी शिक्षाओं को व्यवहार में लाना चाहिए तथा समाज के अन्य लोगों तक उन क़ीमती शिक्षाओं को पहुंचाना चाहिए।

रोज़े को अनिवार्य घोषित करते हुए क़ुरआन में यह बात भी कही गई है कि पहले के लोगों पर भी रोज़े फ़र्ज़ किए गए थे। इससे ज्ञात होता है कि इंसान के सुधार के लिए इस इबादत को पहले के लोगों के लिए भी ज़रूरी समझा गया था और उन पर भी लागू किया गया था। यही कारण है कि अन्य धर्म के लोगों में भी व्रत, उपवास (fasting) प्रचलित हैं। हिंदू धर्म में भी विभिन्न अवसरों के लिए व्रत तथा उपवास हैं।

रोज़ा या उपवास का मूल उद्देश्य मन-मस्तिष्क और आत्मा की शुद्धि है, परंतु इसके साथ रोज़े से शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक लाभ भी प्राप्त होते हैं। जापान के वैज्ञानिक Yoshinori Ohsumi जिन्हें कैंसर के इलाज की खोज के लिए नोबेल पुरस्कार दिया गया, उनकी खोज उपवास पर ही आधारित है। अर्थात् उपवास या रोज़े की हालत में स्वभक्षण (Autophagy) प्रक्रिया शरीर की उन अनावश्यक कोशिकाओं को समाप्त करती है जो बहुत बार कैंसर का कारण बन जाती हैं। इसी प्रकार आधुनिक मनोविज्ञान विलंबित संतुष्टि (Delayed Gratification) को, जो रोज़े का मूल है (अर्थात् खानपान और कामेच्छा को टाल देना) मज़बूत व्यक्तित्व के लिए कारगर उपाय मानता है। रोज़े के द्वारा जब व्यक्ति अपनी दिनचर्या के जमे-जमाए चक्र से बाहर निकलता है तथा उसके खान-पान और आराम की समय सारिणी अन्य दिनों से बिल्कुल अलग होती है, इससे भी उसके आत्मबल तथा संकल्प शक्ति (Will Power) में अभूतपूर्व वृद्धि होती है।

आशय यह है कि आध्यात्मिक तथा नैतिक उन्नति के इस पर्व को गंभीरता से लेना चाहिए और एक महीने के इस 'प्रशिक्षण शिविर' से ऐसा व्यक्तिगत तथा सामूहिक लाभ प्राप्त करना चाहिए जो अगले ग्यारह महीनों के लिए हमें ऊर्जा प्रदान करे। ■■

क़ुरआन

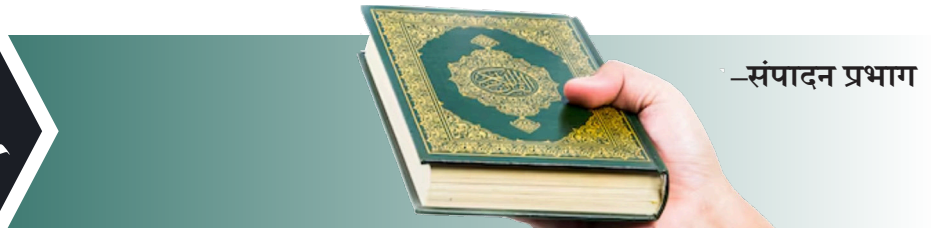

–संपादन प्रभाग

रोज़े फ़र्ज़ किए गए

क़ुरआन में कहा गया :

"ऐ आस्थावान लोगों ! तुम पर रोज़े फ़र्ज़ किए गए, जिस प्रकार तुमसे पहले के लोगों पर फ़र्ज़ किए गए थे इससे आशा है कि तुममें तक़वा (ईशभय) का गुण पैदा होगा।" (क़ुरआनः 2:183)

यह रोज़ा या उपवास फ़र्ज़ करने के संबंध में आदेश है। इसमें यह भी कहा गया है कि तुमसे पहले के लोगों पर भी रोज़े फ़र्ज़ किए गए थे, अर्थात् यह कोई अनोखी इबादत नहीं है। पहले जो ईशदूत आते रहे हैं उनकी उम्मतों को भी यह आदेश दिया गया था। रोज़ों का उद्देश्य यह बताया गया है कि इस इबादत के द्वारा तुममें तक़वा पैदा होगा अर्थात् तुम ईशभय रखने वाले, सदाचारी, संयमी व्यक्तित्व के मालिक बन सकते हो। रोज़े में व्यक्ति भोर से सूर्यास्त तक खाने-पीने, जायज़ दाम्पत्य संबंधों से अपने आपको रोक लेता है। इससे उसमें आत्म-बल और आत्म-संयम पैदा होता है। साथ ही वह ईश्वर की हस्ती का उसके सर्वज्ञानी होने को बार-बार महसूस करता है। वह भयंकर प्यास में भी एक बूंद पानी हलक के नीचे नहीं उतारता क्योंकि उसे विश्वास है कि ईश्वर उसे देख रहा है। यही विश्वास उसे सदाचारी और परहेज़गार बनाता है। आत्म-संयम के इस अभ्यास के द्वारा जब वह जायज़ कामों से रुकने की शक्ति प्राप्त कर लेता है तो फिर नाजायज़ या ग़लत कामों से बचाना उसके लिए बहुत आसान हो जाता है। रोज़ों या उपवास के द्वारा उसके व्यक्तित्व का आध्यात्मिक विकास होता है तथा उसमें नैतिकता, मानवता एवं अनुशासन के गुण आ जाते हैं। एक महीने का यह प्रशिक्षण हर वर्ष व्यक्ति को एक नई ऊर्जा प्रदान करता है।

रोज़ा, रमज़ान और क़ुरआन

"रमज़ान वह महीना है जिसमें क़ुरआन का अवतरण किया गया जो इंसानों के लिए हिदायत (मार्गदर्शन) है और ऐसी स्पष्ट शिक्षाओं पर आधारित है जो सीधा मार्ग दिखाने वाली और सत्य व असत्य का अंतर खोलकर रख देने वाली हैं, अतः अब से जो व्यक्ति इस महीने को पाए उस पर लाज़िम है कि वह इस पूरे महीने के रोज़े रखें।" (क़ुरआन, 2:185)

क़ुरआन की इस आयत से मालूम हुआ कि एक महीने के रोज़ों के लिए इस्लामी कैलेंडर के रमज़ान मास का चयन किया गया। यह महीना इसलिए पावन, मुबारक और महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें अल्लाह ने क़ुरआन को नाज़िल किया, जो संपूर्ण मानवजाति के लिए मार्गदर्शन है। इसमें इंसानों के लिए ऐसी सहज और स्पष्ट शिक्षाएं हैं जो लोगों को सीधा मार्ग दिखाती हैं जिन पर चलकर संसार में सुख और शांति प्राप्त होती है तथा परलोक में भी मुक्ति एवं सफलता मिलती है। इंसानों के लिए ईश्वर की ओर से यह एक बहुत बड़ा उपहार है क्योंकि दुनिया में फैली हुई और शैतान तथा उसके पेलों द्वारा फैलाई गई भ्रामक पगडंडियों के बीच अल्लाह ने क़ुरआन के द्वारा वह रास्ता सुझाया जो उसे सफलता और मुक्ति की ओर ले जाता है। आशय यह है कि रोज़े या उपवास के द्वारा अपने मन-मस्तिष्क को पवित्र करो तथा सीधे और सच्चे मार्ग की जानकारी के लिए ईश्वरीय ग्रंथ क़ुरआन से मार्गदर्शन प्राप्त कर जीवन-यापन करो। ■■

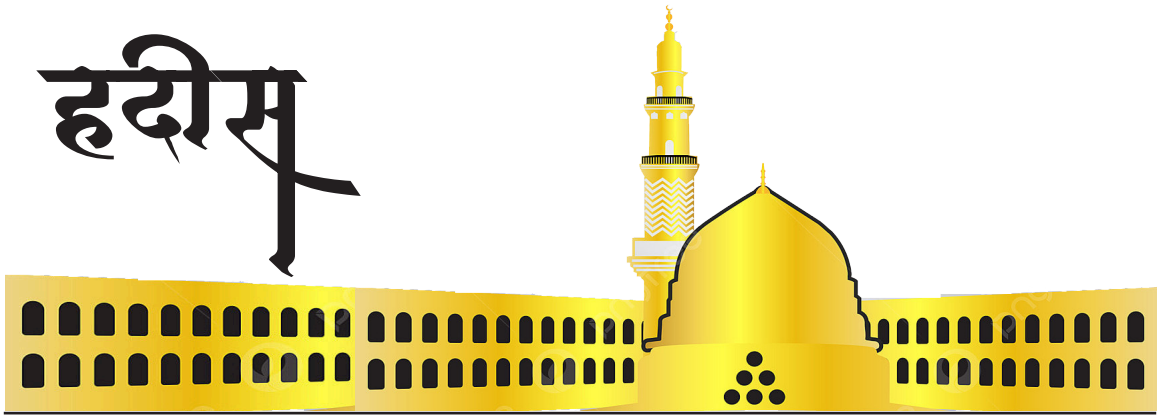

रोज़े से गुनाह माफ़ होंगे

हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) से उल्लिखित है कि पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने कहा :

"जो व्यक्ति रमज़ान के रोज़े ईमान और चेतना के साथ रखे उसके सब पिछले गुनाह क्षमा कर दिए जाएंगे और (इसी प्रकार) जो रमज़ान (के महीने) में ईमान और चेतना के साथ (रातों में अल्लाह के आगे) खड़ा होगा उसके भी सब पिछले गुनाह क्षमा कर दिए जाएंगे और (इसी तरह) जो शबे-क़द्र (क़द्र की रात) में ईमान और चेतना के साथ (नमाज़ में) खड़ा होगा उसके भी सब पिछले गुनाह क्षमा कर दिए जाएंगे।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : ईमान का अर्थ यह है कि अल्लाह और आख़िरत के बारे में जो धारणा इस्लाम ने दी है वह ताज़ा रहे। चेतना के लिए वास्तव में यहां इहतिसाब शब्द प्रयुक्त हुआ है। इहतिसाब का अर्थ यह है कि वह अल्लाह की ख़ुशी और प्रसन्नता का इच्छुक हो। हर समय अपने विचारों और कर्मों पर निगाह रखे कि कहीं वह अल्लाह की इच्छा के प्रतिकूल तो नहीं जा रहा है। उसके कर्म और विचार के पीछे कोई ग़लत भावना तो काम नहीं कर रही है। ईमान और इहतिसाब के साथ रोज़ा रखने से अल्लाह उसके पिछले गुनाहों को क्षमा कर देता है, इसलिए कि वह कभी गुनहगार था भी तो अब वह नाफ़रमानी से रुक गया और अल्लाह की ओर पलट आया। क़द्र की रात रमज़ान की वह रात है जिसमें क़ुरआन का अवतरण हुआ। 'शबे-क़द्र' का अर्थ है बड़ी गरिमामय और महानता एवं महत्व रखने वाली रात।

रोज़ेदार का आचरण

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने कहा :

"जब तुममें से किसी का रोज़ा हो तो वह न तो अश्लील बात ज़बान पर लाए और न शोर मचाए। और अगर कोई उसे गाली दे या लड़े तो कह दे कि मैं रोज़े से हूं।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में यह शिक्षा दी गई है कि रोज़े में केवल खान-पान और दांपत्य सुख का ही त्याग नहीं है, बल्कि अपने आचरण में सुधार करना है, अश्लीलता से दूर रहना है, लड़ाई-झगड़े को त्याग देना है।

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने कहा :

"जिस व्यक्ति ने (रोज़े की हालत में) झूठ बोलना और उसपर अमल करना न छोड़ा तो अल्लाह को इसकी कोई आवश्यकता नहीं की वह (रोज़ा रखकर) अपना खाना-पीना छोड़ दे।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यहां रोज़ा फ़र्ज़ करने का मक़सद बताया गया है। अल्लाह चाहता है कि इंसान नेक बने, सच्चाई और ईमानदारी के साथ जीवन व्यतीत करे। रोज़ेदार को रोज़े के इस मक़सद को अपने सामने रखना चाहिए। ■■



A Well Wisher

हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि.) कहते हैं कि दो रोज़ेदारों ने ज़ुह्र या अस्र की नमाज़ पढ़ी। जब नबी (सल्ल.) नमाज़ अदा कर चुके तो आपने कहा : तुम दोनों दोबारा वुज़ू करके नमाज़ पढ़ो और अपना रोज़ा पूरा करके दूसरे दिन क़ज़ा रोज़ा रखो। उन्होंने कहा : क्यों, ऐ अल्लाह के रसूल? आपने कहा तुमने अमुक व्यक्ति की ग़ीबत (परोक्ष निन्दा) की है।

(हदीस : बैहक़ी)

J. I. H., Piro, Bhojpur (Bihar)

जीवन आदर्श

अंतिम पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) सामाजिक गतिविधियां



❖मुशर्रफ़ अली

काबा का पुनर्निर्माण

हाथियों वाली घटना के 35 वर्ष बाद मक्का के क़ुरैश ने काबा के नवनिर्माण का फ़ैसला किया। पुरानी इमारत बहुत जर्जर हो गयी थी और उसपर छत भी नहीं थी। हज़रत इबराहीम (अलैहि०) के समय से ही वह 9-10 फ़ुट ऊंची एक ख़ुली इमारत थी, जिसमें रखी चीज़ें सुरक्षित नहीं थी। वहां से चोरी भी हो चुकी थी। नवनिर्माण का तात्कालिक कारण यह बना कि उसी वर्ष आयी बाढ़ ने उसे इतना कमज़ोर कर दिया था कि वह किसी भी समय ढह सकती थी।

सदियों से चली आ रही मूर्तिपूजा के कारण मक्का के क़ुरैश का बहुत नैतिक ह्रास हुआ था, लेकिन काबा के साथ आज भी उन्हें सच्चा लगाव था। अतः क़ुरैश ने फ़ैसला किया कि काबा के निर्माण में हराम की कमाई की एक पाई का भी इस्तेमाल न होगा। वेश्यावृत्ति और ब्याज उनके समाज में बुराई नहीं समझी जाती थी, लेकिन उन्होंने घोषणा कर दी कि इस निर्माण में वेश्यावृत्ति और ब्याज से प्राप्त धन का इस्तेमाल नहीं होगा और न ही अन्यायपूर्वक किसी से लिया गया धन इसमें लगाया जाएगा।

मक्का वालों ने सारी तैयारी कर ली। क़बाइली समाज में कुछ चीज़ों पर कभी सहमति नहीं बन पाती है। अतः वहां भी हरेक क़बीले को बता दिया गया कि उसे किस दीवार का कितना भाग बनाना है। इसी के आधार पर हरेक क़बीला अपने हिस्से की निर्माण सामग्री (पत्थर आदि) ले आया।

अब पुरानी इमारत को ढहाने का समय आया, मगर कोई भी फावड़ा चलाने का साहस नहीं जुटा पाया। बड़ी हिम्मत करके वलीद बिन मुग़ीरा मख़ज़ूमी नाम का एक व्यक्ति आगे बढ़ा और उसने ढहाने का काम शुरू किया। उस दिन लोग उसे देखते रहे, लेकिन कोई उसका साथ देने नहीं आया। वलीद पर जब कोई मुसीबत नहीं आयी और वह अगले दिन दीवारें ढहाने फिर आ पहुंचा तो दूसरे लोग भी आगे बढ़े। दीवारें ढहा दी गयीं लेकिन नींव को नहीं छेड़ा गया। उसी नींव पर निर्माण कार्य शुरू हुआ। क़ुरैश ने निगरानी के लिए एक रोमन इंजीनियर को भी बुला लिया था।

जब दीवार इतनी ऊंची उठ गयी जहां 'हज्रे-असवद' (एक काला पत्थर जो पहले से काबा की दीवार पर लगा हुआ था, और जिसके बारे में मान्यता है कि हज़रत इबराहीम (अलैहि०) जब पहली बार काबा का निर्माण कर रहे थे तो उन्हें जन्नत से एक फ़रिश्ते ने यह पत्थर लाकर दिया था।) लगाना था तो एक बार फिर विवाद फूट पड़ा। हर क़बीला चाहता था कि हज्रे-असवद की स्थापना उसके द्वारा की जाए

और इससे कम पर कोई राज़ी नहीं था। झगड़ा बढ़ता गया और निर्माण रुक गया।

चार-पांच दिन गुज़र गये। ऐसा लगता था कि तलवारें निकल आएंगी, लेकिन उन्हीं में से एक बूढ़े व्यक्ति ने एक ऐसा सुझाव दिया जिसे सबने मान लिया। बूढ़े ने कहा कि ऐसा करते हैं कि अब जो व्यक्ति भी सबसे पहले मस्जिदे-हराम (यानी काबा के चारों ओर का वह क्षेत्र जहां लोग काबा की ओर मुंह करके सजदा करते हैं) के उक्त दरवाज़े से अन्दर प्रवेश करेगा उसे अपना हकम (फ़ैसला करने वाला) बना लेते हैं, फिर वह जो फ़ैसला कर दे वह सबके लिए मान्य होगा। सारे क़बीले इसके लिए सहमत हो गये। सुसंयोग यह हुआ कि उस दरवाज़े से उसके बाद सबसे पहले प्रवेश करने वाले व्यक्ति हज़रत मुहम्मद थे। उन्हें देखते ही हर व्यक्ति ख़ुशी से उछल पड़ा और नारे लगाने लगा। ये हज़रत मुहम्मद हैं, ये सच्चे और ईमानदार आदमी हैं, हम इनके लिए राज़ी हैं।

हज़रत मुहम्मद ने सारी बात सुनने के बाद एक बड़ी-सी चादर मंगवायी। उसे ज़मीन पर फैलाकर हज्रे-असवद उसपर उठाकर रख दिया। फिर सभी क़बीलों के प्रतिनिधियों से कहा कि वे चादर का किनारा पकड़ कर उठाएं और वहां तक ले जाएं जहां पत्थर लगाना है। जब चादर वहां पहुंचा दी गयी तो हज़रत मुहम्मद ने अपने हाथों से पत्थर उठाकर सही जगह पर लगा दिया। यह ऐसा फ़ैसला था जिसपर किसी को आपत्ति नहीं हुई।

सामाजिक गतिविधियां

शादी के बाद हज़रत मुहम्मद के जीवन में ठहराव आ गया था, संघर्ष का दौर गुज़र चुका था। अब उनके पास बड़े पैमाने पर व्यापार करने की सारी सुविधाएं उपलब्ध थीं, लेकिन उनका मक़सद व्यापार करना और धन कमा कर एक बड़ा व्यापारी बनना कदापि नहीं था। उन्होंने कुछ समय तक तो व्यापार किया, लेकिन वे उन समस्याओं को लेकर चिंतित रहने लगे जिनसे अरब समाज जूझ रहा था। हर दौर की तरह उस दौर में भी ग़रीबी एक बड़ी समस्या थी, एक वर्ग द्वारा वंचितों का शोषण और अधिकार हनन आम था। ब्याज ने समाज को बुरी तरह जकड़ रखा था। शराब के कारण परिवार टूट रहे थे।

हज़रत मुहम्मद से जहां तक हो सकता ग़रीबों की मदद करते। ज़रूरतमन्दों को तलाश करके उनके पास जाते और उनकी ज़रूरतें पूरी करते। उन्होंने देखा कि उनके चचा अबू-तालिब की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है और उनकी कई संतानें हैं। तो उनके एक बेटे अली को अपने पास ले आये और आपने एक दूसरे चचा को तैयार किया कि वे भी अबू-तालिब के एक बेटे के पालन-पोषण की ज़िम्मेदारी ले लें। शोषितों और पीड़ितों की मदद के लिए वे हर समय तैयार रहते। वंचितों को उनका हक़ दिलाने के लिए आगे-आगे रहते। ब्याज की जकड़न से लोगों को निकालने की कोशिश करते। साहूकारों को समझाते कि वे क़र्ज़दारों के साथ नर्मी बरतें, मूल लेकर ब्याज माफ़ कर दें और ग़रीबों की मजबूरी का फ़ायदा न उठाएं। उस ज़माने के अरब में ग़ुलामों की ख़रीद-बिक्री होती थी। हज़रत मुहम्मद को यह चलन बहुत ही अप्रिय था। वे यह देखकर परेशान थे कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का स्वामी बना बैठा है।

हज़रत मुहम्मद को उनकी पत्नी ख़दीजा ने एक ग़ुलाम उपहारस्वरूप दिया था, वह एक किशोर था, जिसका नाम ज़ैद बिन हारिस था। हज़रत मुहम्मद ने उसे कभी ग़ुलाम नहीं समझा। उसे अपने साथ खाना खिलाते, अपने जैसे कपड़े पहनने को देते और उसे हर वह सुविधा देते जो एक बेटे को दी जाती है।

ज़ैद इससे बहुत प्रभावित हुआ वह हर समय आपके पास ही रहना चाहता। ज़ैद वास्तव में एक अच्छे परिवार का लड़का था, जिसका कुछ डाकुओं ने एक मेले से अपहरण कर लिया था और शहर लाकर बेच दिया था, जिसे ख़दीजा के भाई ने ख़रीद लिया था और इस तरह वह यहां तक पहुंचा था। बाद में जब उसके घर वालों को पता चला तो उसके पिता और चाचा हज़रत मुहम्मद के पास उसे लेने आये। हज़रत मुहम्मद ने भी ज़ैद पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाया और कहा

कान्ति मासिक के सभी पाठक

कृपया ध्यान दें!

अपना पूरा नाम : .....

पता : .....

पोस्ट ऑफिस : .....

डिस्ट्रिक्ट : .....स्टेट : .....पिन : .....

कांटेक्ट नंबर : .....

नीचे दिए गए व्हाट्सऐप नम्बर पर भेजने की मेहरबानी करें।

धन्यवाद!

व्हाट्सऐप नंबर : 98187 99223

नोट : अपना कांटेक्ट नंबर लिखना न भूलें।

कि अगर वह जाना चाहता है तो जा सकता है, लेकिन ज़ैद ने हज़रत मुहम्मद को छोड़कर अपने पिता के साथ जाने से इन्कार कर दिया। ज़ैद के पिता आश्चर्यचकित रह गये, लेकिन उन्हें ख़ाली हाथ लौटना पड़ा। हज़रत मुहम्मद चाहते थे कि ग़ुलामों के साथ ऐसा ही व्यवहार किया जाए।

शराब पीना उस समय के समाज में बुराई नहीं समझा जाता था सभ्य और संभ्रांत लोग भी खुलेआम शराब पीते थे, लेकिन हज़रत मुहम्मद शुरू से ही उसे एक बहुत बुरी चीज़ समझते थे। उन्होंने कभी उसकी एक बूंद भी ज़बान पर नहीं डाली। वे दूसरों को भी रोकते और इससे होने वाले नुक़सानों से लोगों को अवगत कराते रहते थे।

हज़रत मुहम्मद ने जिस समाज में आंखें खोली थीं वहां की आध्यात्मिक हालत से वे बहुत असंतुष्ट थे। लोगों की धार्मिक मान्यताएं स्पष्ट नहीं थीं। सांसारिक जीवन और मरने के बाद के जीवन के बारे में लोगों की कोई ठोस अवधारणा नहीं थी। लोग पूजा तो मूर्तियों की करते थे, लेकिन मुसीबत की घड़ी में सहायता किसी अनदेखे ईश्वर से मांगते थे। अबरहा ने भी जब काबा पर चढ़ाई की थी तो भी किसी ने किसी देवी-देवता से सहायता नहीं मांगी थी जबकि काबा में हर क़बीले ने अपने-अपने देवताओं की लकड़ी और पत्थर की मूर्तियां रखी हुई थीं। सबने अनदेखे ईश्वर से मदद मांगी थी और उसी ने मदद की थी।

हज़रत मुहम्मद ने सारी बात सुनने के बाद एक बड़ी-सी चादर मंगवायी। उसे ज़मीन पर फैलाकर हज्रे-असवद उसपर उठाकर रख दिया। फिर सभी क़बीलों के प्रतिनिधियों से कहा कि वे चादर का किनारा पकड़ कर उठाएं और वहां तक ले जाएं जहां पत्थर लगाना है। जब चादर वहां पहुंचा दी गयी तो हज़रत मुहम्मद ने अपने हाथों से पत्थर उठाकर सही जगह पर लगा दिया। यह ऐसा फ़ैसला था जिसपर किसी को आपत्ति नहीं हुई।

हज़रत मुहम्मद इस दोहरेपन को देखकर बहुत विचलित रहते थे। बचपन से ही स्वभावतः उन्होंने कभी किसी मूर्ति के सामने अपना सिर नहीं झुकाया। सिर झुकना तो दूर उनके मन में इनके लिए कभी आदर और सम्मान की भावना भी नहीं पैदा हुई बल्कि उनको इनसे चिढ़ और नफ़रत ही रही।

12 वर्ष की उम्र में चचा अबू-तालिब के साथ सीरिया की पहली यात्रा के दौरान जब बुसरा के स्थान पर बुहैरा पादरी हज़रत मुहम्मद से आकर मिला था तो उसने क़ुरैश की सर्वप्रतिष्ठित देवियां 'लात' और 'उज़्ज़ा' की क़सम देकर उनसे कुछ बातें पूछने की कोशिश की भी, लेकिन बालक हज़रत मुहम्मद ने उसके सामने स्पष्ट कर दिया था आप उन देवियों की क़सम देकर मुझे कुछ नहीं पूछ सकते, क्योंकि मुझे उनसे नफ़रत है। बुहैरा मुस्कराये और उन्होंने अल्लाह की क़सम देकर हज़रत मुहम्मद से कुछ सवालात किये।

एकांतवास

अपने दादा अब्दुल मुत्तलिब की तरह हज़रत मुहम्मद को भी काबा से अत्यधिक लगाव था, मगर उनका झुकाव काबा में रखी मूर्तियों की ओर कभी नहीं हुआ। समाज में वे मानवनिर्मित देवी-देवताओं की पूजा होते देखते थे, बड़े धूमधाम से उनके उत्सव मनाये जाते थे मन्नतें मांगी जाती थीं और चढ़ावे चढ़ाये जाते थे, जबकि इनका कोई आधार नहीं था। हज़रत मुहम्मद की आत्मा एक ईश्वर की ओर खिंचती थी, लेकिन उनको उसकी पूजा आराधना का कोई तरीक़ा मालूम नहीं था, अतः धीरे-धीरे वे सामाजिक गतिविधियों से दूर होने लगे। भलाई के कामों में तो वे समाज का साथ देते, लेकिन ऐसे बेतुके काम जिनका कोई औचित्य नहीं होता, उनसे वे अलग होते चले गये। वे अधिकतर अकेले बैठकर इस स्थिति पर विचार करते रहते।

यहां तक कि वे घर से चार किलोमीटर दूर एक पहाड़ी पर बनी 'हिरा' नाम की एक छोटी-सी गूफा में जाकर बैठने लगे। यह गूफ़ा चार गज़ लम्बी और पौने दो गज़ चौड़ी थी। उसमें गहराई भी नहीं थी, बल्कि एक संकरे रास्ते में ऊपर से चट्टानों के मिल जाने से खोह का रूप बन गया है। हज़रत मुहम्मद कई-कई दिन वहां अकेले बैठे रहते और कई बार रात भी वहीं बिताते। यहां आप सृष्टि का अध्ययन करते और सृष्टि को चलाने वाली शक्ति पर विचार करते रहते और ईश्वर से प्रार्थना करते कि वह उन्हें सीधा मार्ग दिखा दे। उनकी पत्नी ख़दीजा उसी गुफ़ा में आपके लिए खाना-पानी भेज देतीं।

गुफ़ा में जा बैठना कोई ऐसी बात नहीं थी, जिसपर क़ुरैश को आश्चर्य होता क्योंकि एकांतवास इस्माईल की संतानों में एक पारंपरिक प्रक्रिया थी लगभग हर पीढ़ी में एक दो व्यक्ति ऐसे निकल आते जो किसी एकांत स्थान पर जा बैठते ताकि उन्हें प्रकृति पर मनन-चिन्तन करने के लिए उचित माहौल मिल जाए। हज़रत मुहम्मद ने भी अपनी उम्र के 37 से 40 वर्ष

के बीच 3 वर्षों में यही किया।

नबी बनाया जाना

दो चार दिन गुफ़ा में रहकर हज़रत मुहम्मद घर आ जाते, लेकिन जल्दी ही फिर गुफ़ा में चले जाते। धीरे-धीरे दुनिया से आपकी उकताहट बढ़ती गयी। लेकिन साथ ही मनुष्य और दूसरे प्राणियों से प्रेम और सहानुभूति भी बढ़ती गयी। अब उनसे दूसरों का दुख-दर्द नहीं देखा जाता था। जब वे गुफ़ा से निकल कर आते तो खुले हाथों दान करते। उन्होंने व्यापार से जो धन सम्पत्ति जमा की थी, कुछ ही दिनों में सब दान कर दी। ख़दीजा जो कि पुरानी व्यापारी महिला थीं उनकी सम्पत्ति भी धीरे-धीरे ख़त्म होने लगी। हज़रत मुहम्मद एकदम से मनुष्य का दुख दूर कर देना चाहते थे, वे चाहते थे कि संसार में कोई भी दुखी न रहे। सारा धन दान करके भी उनको संतोष नहीं हुआ। वे आम मनुष्य के रवैये से विशेष रूप से दौलतमन्दों के रवैये से बहुत दुखी थे। मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण देखकर वे बहुत चिंतित थे। वे इस स्थिति के सुधार के लिए कुछ करना चाहते थे, लेकिन उनके सामने कोई तरीक़ा मौजूद नहीं था। वे एक ऐसी व्यवस्था चाहते थे जिसमें मनुष्य के नैतिक गुणों का विकास हो।

हज़रत मुहम्मद अक्सर सोचते कि ईश्वर की सृष्टि कितनी सुव्यवस्थित है। सूर्य, चांद, तारे, बादल, हवा, वर्षा, नदी वनस्पति, पहाड़ सब एक व्यवस्था का अंग हैं और अपनी-अपनी भूमिका निभा रहे हैं। इस सृष्टि में मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जिसे ईश्वर ने सोचने-समझने की शक्ति दी है। निश्चित रूप से इसकी भूमिका काफ़ी अधिक महत्वपूर्ण होगी। निश्चित रूप से मनुष्य के जीवन का कोई उद्देश्य होगा। हज़रत मुहम्मद वह उद्देश्य जानने को व्याकुल रहते थे।

इसी बीच एक दिन 2 फ़रवरी 610 ई॰ को जब हज़रत मुहम्मद की उम्र 40 वर्ष 11 दिन थी और वे गुफ़ा में मौजूद थे तो वहां अल्लाह का एक फ़रिश्ता प्रकट हुआ। उसने हज़रत मुहम्मद को गले से लगाकर ज़ोर से भींचा, इतनी ज़ोर से कि उनकी पसलियां दुखने लगीं। फिर उसने क़ुरआन की कुछ आयतें सुनायीं। हज़रत मुहम्मद ने उन आयतों को फ़रिश्ते के साथ दोहराया फिर वह फ़रिश्ता चला गया। हज़रत मुहम्मद को ऐसा लगा जैसे वे आयतें उनके दिल पर लिख दी गयी हैं। यह सब कुछ कोई आसान नहीं था। हज़रत मुहम्मद का पूरा शरीर थर-थर कांपने लगा, दिल भी बड़ी तेज़ी से धड़क रहा था। वे सोच रहे थे कि अभी मुझ से किसने बातें कीं, कौन मुझे अभी पढ़ाकर गया है? वे तेज़ी से गुफ़ा के बाहर आये। उनका पूरा शरीर कांप रहा था, वे यह जानने को बेचैन थे कि वह कौन था, जो पढ़ने को कह रहा था? अचानक एक आवाज़ आयी : मुहम्मद! उन्होंने घबराकर सर ऊपर उठाया तो देखा वही फ़रिश्ता आकाश में खड़ा था और पुकार कर कह रहा था : मुहम्मद! अल्लाह ने आपको रसूल बनाया है। मैं आपके पास उसका संदेश–वह् य (ईशवाणी)लेकर आया हूं। मैं जिबरील हूं। मैं अल्लाह का फ़रिश्ता हूं। हज़रत मुहम्मद की घबराहट और बढ़ गयी। वे दाहिने-बाएं देखने लगे, हर तरफ़ वही फ़रिश्ता दिखाई देता। वे पहाड़ी से नीचे उतर आए और भागे-भागे घर पहुंचे। घर पहुंचते ही उन्होंने ख़दीजा से कहा, मुझे कुछ उढ़ाओ, मुझे कुछ उढ़ाओ। ख़दीजा ने जल्दी से एक चादर लाकर उनके शरीर पर डाल दी। थोड़ी देर में उनकी हालत ठीक हो गयी और उनको जो डर लग रहा था वह भी दूर हो गया। अब हज़रत मुहम्मद ने ख़दीजा को फ़रिश्ते वाली घटना सुनायी और कहा कि यह मुझे क्या हो गया है, मुझे तो अपनी जान का डर लगने लगा है। ख़दीजा ने ढाढ़स बंधाते हुए कहा नहीं अल्लाह आपको मिटाएगा नहीं, आप रिश्तों का आदर करते हैं, कमज़ोरों का बोझ उठाते हैं, ग़रीबों के लिए व्यवस्था करते हैं, अतिथि का सत्कार करते हैं और मुसीबत में लोगों के काम आते हैं।

फिर ख़दीजा हज़रत मुहम्मद को लेकर अपने चचेरे भाई वरक़ा बिन नौफ़ल के पास गयीं जो बहुत बूढ़े और अंधे हो चुके थे। वरक़ा भी सत्य की खोज में थे उन्होंने बहुत पहले मूर्तिपूजा छोड़कर ईसाइयत अपना ली थी। वे हिब्रू भाषा जानते थे और अंधे होने से पहले हिब्रू में इंजील लिखा करते थे। इंजील की भविष्यवाणी के आधार पर वे भी एक नबी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। जब ख़दीजा ने उन्हें हज़रत मुहम्मद के बारे में बताया तो वे सब कुछ समझ गये। उन्होंने हज़रत मुहम्मद से कहा यह तो वही सम्मान है जो मूसा पर अवतरित हुआ था। काश मैं इस समय स्वस्थ होता आने वाले समय में स्वस्थ और बलवान होता जब तुम्हारे लोग तुम्हें निकाल देंगे। हज़रत मुहम्मद ने आश्चर्य से पूछा तो क्या ये लोग मुझे निकाल देंगे। वरक़ा ने कहा हां, जब भी कोई आदमी इस तरह का संदेश लाया जैसा तुम लाये हो उससे ज़रूर दुश्मनी की गयी। अगर मैं उस समय जीवित रहूंगा तो तुम्हारा समर्थन करूंगा। लेकिन कुछ ही दिनों बाद वरक़ा की मौत हो गयी। ■■

प्रकाश स्तंभ



रोज़ा : आदमी को इंसान बनाने का मज़बूत ज़रिया

❖मुहम्मद शकील शम्सी

रमज़ान का महीना एक बार फिर इंसानियत के अपने व्यावहारिक संदेश के साथ हम पर छा चुका है। इंसानियत ही वह बहुमूल्य वस्तु है जो यदि किसी इंसान में है तो वह इंसान है, अन्यथा वह दो पैरों वाला जानवर है। यदि हमारे समाज में इंसानियत मौजूद है, तभी हम शांति और अनुशासन की अपेक्षा कर सकते हैं, अन्यथा समाज में पशुता और नफ़रत का बोलबाला होगा और सुख-चैन नष्ट हो जाएगा। इसीलिए साल में एक बार ईश्वर (अल्लाह) इंसान के भीतर मौजूद इंसानियत के बाग़ को सींचने का आदेश देता है ताकि उसका लगाया हुआ इंसानों का बाग़ तरो-ताज़ा रहे। इस संबंध में ईश्वर केवल आदेश देने पर बस नहीं करता, बल्कि एक नियोजित विस्तृत तरीक़ा बताता है ताकि हर व्यक्ति अपने ईमान और इंसानियत की बैटरी को पूरी तरह रिचार्ज कर ले, जिससे आदमी, इंसान बना रहे और भेड़िया न बन जाए।

इस कार्य के लिए ईश्वर ने एक विशेष महीना रमज़ान का चयन किया ताकि सारे लोग एक साथ इस कार्य को सामूहिक रूप से संपन्न करें। किसी कार्य को सामूहिक रूप से करने के जो प्रभाव और लाभ हैं, वे किसी दूरदर्शी व्यक्ति से छिपे नहीं हैं। दूसरी बात यह है कि यही वह महीना है जिसमें क़ुरआन जैसी इंसानियत की महानतम किताब अवतरित हुई। इंसानियत की शिक्षा और उसके प्रसार के लिए इससे बेहतर कौन-सा महीना हो सकता है? इसीलिए ईश्वर ने इसी माह का चयन किया।

दूसरा आदेश यह दिया कि इस महीने में लगातार एक महीने का रोज़ा रखा जाए। रोज़ा भोर से सूर्यास्त तक खाने-पीने और यौन सुख को त्यागने का नाम है। ध्यान दें तो पता चलेगा कि ये तीन ऐसी शक्तिशाली मानवीय इच्छाएं हैं जिनकी वजह से तमाम आर्थिक गतिविधियां अस्तित्व में आई हैं। यदि ये न हों तो तमाम मानवीय गतिविधियां और भाग-दौड़ एकाएक मंद पड़ जाएं। यही तीन इच्छाएं यदि अपनी प्राकृतिक सीमाओं का उल्लंघन कर जाएं, तो फिर इंसान, इंसान नहीं रहता बल्कि पशु हो जाता है। दूसरों के अधिकारों पर डाके डालता है; लूट-मार, चोरी, हत्या और बलात्कार जैसी क्रूर घटनाएं और हर तरह के अमानवीय कार्य सामने आते हैं और देखते-देखते मानव समाज पशुओं के झुंड का बदतर रूप ले लेता है। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि ये तीनों इच्छाएं अपनी सीमाओं के भीतर रहें ताकि इंसानियत क़ायम रहे।

विचार कीजिए कि यदि एक महीने तक सुबह से शाम तक स्वयं पर नियंत्रण रखकर धैर्य के साथ एक विशेष समय तक इन तीनों बुनियादी इच्छाओं की अनिवार्य और वैध ज़रूरतें भी पूरी न की जाएं, तो सामान्य दिनों में इन तीनों ज़रूरतों को अपनी सीमाओं में रखने में कोई कठिनाई नहीं

होगी; इंसान, इंसान बना रहेगा और समाज अन्याय और अत्याचार से मुक्त रहेगा।

यही वह गुण है जो ईश्वर रोज़े के माध्यम से इंसान के अंदर पैदा करना चाहता है और उसे 'तक़वा (ईशपरायणता)' जैसे व्यापक शब्द से नवाज़ता है। क़ुरआन में ईश्वर का कथन है–

"ऐ विश्वास रखने वालों! तुम्हारे ऊपर रोज़ा अनिवार्य किया गया जैसा कि तुमसे पहले के समुदायों पर अनिवार्य किया था ताकि तुम्हारे अंदर तक़वा का गुण पैदा हो जाए।"

(क़ुरआन, 2:183)

शब्दकोश के अनुसार, 'तक़वा' ईश्वर के डर से उसकी अवज्ञा से बचने का नाम है, लेकिन अस्ल में 'तक़वा' इंसान का वह आंतरिक गुण है जो इंसान को धैर्य और सहनशीलता के साथ अपनी प्राकृतिक सीमाओं का उल्लंघन करने से रोक देता है। दूसरे शब्दों में, जिस प्रकार इंसान के भौतिक शरीर के भीतर उसकी रोग प्रतिरोधक क्षमता (Immunity) जितनी अधिक शक्तिशाली होती है, उतना ही वह बैक्टीरिया, वायरस और अन्य कीटाणुओं के हमलों से सुरक्षित रहता है। ठीक इसी प्रकार इंसान के आध्यात्मिक शरीर के भीतर जो 'इम्युनिटी' होती है, यदि उसे मज़बूत किया जाए तो इंसान आंतरिक बीमारियों जैसे—क्रोध, ईर्ष्या, झूठ, धोखा, अत्याचार, फ़साद और पीठ पीछे बुराई (ग़ीबत) जैसी अमानवीय बुराइयों से बचा रहता है और प्रेम, सहानुभूति, बलिदान और आपसी सहयोग जैसे मानवीय गुण पनपते हैं। यही वह आध्यात्मिक 'इम्युनिटी' है जिसे क़ुरआन 'तक़वा' कहता है और रोज़ा इसे ही और ज़्यादा मज़बूत करता है ताकि इंसान का मानवीय गुण सुरक्षित रहे। यही वह वास्तविकता है जिसे पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने 'ढाल' कहा है। आपने फ़रमाया कि 'रोज़ा ढाल है' (हदीस : बुख़ारी)। जिस तरह ढाल तलवार के वार को रोकती है, 'तक़वा' शैतानी हमले जैसे—क्रोध, ईर्ष्या और अत्याचार के हमले को ढाल बनकर रोकता है।

रोज़ा भोर से सूर्यास्त तक खाने-पीने और यौन सुख को त्यागने का नाम है। ध्यान दें तो पता चलेगा कि ये तीन ऐसी शक्तिशाली मानवीय इच्छाएँ हैं जिनकी वजह से तमाम आर्थिक गतिविधियाँ अस्तित्व में आई हैं। यदि ये न हों तो तमाम मानवीय गतिविधियाँ और भाग-दौड़ एकाएक मंद पड़ जाएँ। यही तीन इच्छाएँ यदि अपनी प्राकृतिक सीमाओं का उल्लंघन कर जाएँ, तो फिर इंसान, इंसान नहीं रहता बल्कि पशु हो जाता है।

एक दूसरी हदीस में पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) का कथन है–"जिसने (रोज़े की स्थिति में) झूठ बोलना और उस पर अमल करना नहीं छोड़ा, तो ईश्वर को उससे कोई मतलब नहीं है कि किसी ने खाना-पीना छोड़ दिया था (सही बुख़ारी)।" इस हदीस से बिलकुल स्पष्ट है कि रोज़े का उद्देश्य केवल खाना-पीना छोड़ना नहीं, बल्कि बुराइयों को छोड़ना है।

झूठ एक ऐसी बुराई है जिसे न केवल पूरी दुनिया बल्कि स्वयं झूठा इंसान भी बुरा ही समझता है। झूठ सच को अस्थायी रूप से छिपा लेता है और फिर झूठा इंसान झूठ के सहारे हज़ारों तरह के अपराध करता फिरता है। लोगों के जीवन, धन और सम्मान पर डाके डालता है और अपराध करने की हिम्मत उसे झूठ ही प्रदान करता है। वह लोगों से झूठ बोलता है कि उसने अपराध नहीं किया। अदालत में झूठ बोलकर और लोगों से झूठी गवाही दिलवाकर अपना बचाव करता है। कई बार अदालत भी अपराधी या उसके वकील की वाकपटुता से प्रभावित होकर उसे बेगुनाह मान लेती है और यह झूठी बेगुनाही अपराधी को और अपराध करने का साहस देती है। यानी हर तरह के अपराध और फ़साद में झूठ की प्रमुख भूमिका है। रोज़ा झूठ पर लगाम लगाकर एक अपराधी के चरित्र को बहुत से अपराधों से पवित्र करता है, जिससे समाज में सुख-शांति को बढ़ावा मिलता है।

इसके अलावा रोज़ा केवल झूठ पर पाबंदी नहीं लगाता, बल्कि हमारी ज़बान पर भी पाबंदी लगाकर इसके ग़लत इस्तेमाल से रोकता है। एक ग्रामीण कहावत प्रसिद्ध है

कि 'यह ज़बान ही है जो भात भी खिलाती है और लात भी खिलाती है'। अर्थात् ज़बान का सही इस्तेमाल इंसान को सम्मानित बनाता है और ग़लत इस्तेमाल अपमानित। रोज़ा ज़बान के सही इस्तेमाल की न केवल शिक्षा देता है बल्कि लगातार एक महीने तक इसका प्रशिक्षण करता है। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) का कथन है–'रोज़ा ढाल है। तुममें से जिस किसी का रोज़ा हो वह न अश्लील बातें करे और न शोर-शराबा करे।' (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

आदमी जो भी बात ज़बान से निकालता है, वह उसकी सोच और दिमाग़ से होकर गुज़रती है। यदि बात अश्लील और गंदी हो, तो बोलने वाले का दिमाग़ और सोच सब गंदा होता है। फिर जिससे बोलता है, उसका दिमाग़ भी गंदा करता है। ऐसे दो-चार लोग भी पूरे समाज को गंदा करने के लिए पर्याप्त हैं। दूसरी ओर, रोज़े में शोर-शराबे से भी रोका गया है। शोर-शराबा भी समाज पर बुरा प्रभाव डालता है और स्वयं इंसान की ऊर्जा व्यर्थ होती है। समाज में रहने वाले वृद्ध, बीमार और पढ़ने वाले बच्चे आदि सभी के लिए यह कष्ट का कारण बनता है। ज़बान और स्वयं पर नियंत्रण रखने के लिए तो पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने यहां तक फ़रमाया कि 'यदि कोई तुम्हें गाली दे या तुम से लड़ाई-झगड़ा करे, तो तुम (जवाब में) केवल यह कहो कि मैं रोज़े से हूं (हदीसः बुख़ारी, मुस्लिम)'। अर्थात् स्वयं तो बुराई न करो, बल्कि यदि दूसरे भी तुम्हें उकसाना चाहें, तब भी अपनी ज़बान और अपने आप पर नियंत्रण रखो। इस तरह का प्रशिक्षण लगातार एक महीने तक चले, तो वह इंसान को व्यक्तिगत रूप से और समाज को सामूहिक रूप से गंदगी और बुराई से कितना पवित्र कर देगा, यह हर कोई समझ सकता है।

इसी तरह शरीर के सभी अंगों का रोज़ा होता है, केवल भूखे-प्यासे रहना उद्देश्य नहीं है। अर्थात् कान, आंख, ज़बान, हाथ, पैर और दिमाग़ आदि का बुरा प्रयोग जैसे—बुरा सुनना, बुरा देखना, बुरा बोलना, बुरा करना, बुराई की ओर चलकर जाना और बुरा सोचना—इन सबसे बचना ज़रूरी है। जिसने रोज़े में अपने शरीर के सारे अंगों को नियंत्रण में नहीं रखा और बुराई से नहीं बचाया, उसके बारे में पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) का कथन है कि 'बहुत से ऐसे रोज़ेदार हैं, जिन्हें अपनी भूख और प्यास के अलावा कुछ भी प्राप्त नहीं होता (हदीस : इब्ने-माजा)'।

इसके अलावा रमज़ान के महीने का एक महत्वपूर्ण हिस्सा ग़रीबों और निर्धनों को खाना खिलाना भी है जिसे 'सदक़ा-ए-फ़ित्र' कहा जाता है। वैसे तो क़ुरआन में निर्धनों के साथ सहानुभूति पर बहुत ज़ोर दिया गया है और इसे कोई एहसान नहीं बल्कि उनका अधिकार क़रार दिया गया है। क़ुरआन में ईश्वर का कथन है–'उनके धन में मांगने वालों और वंचितों का अधिकार है (क़ुरआन, 51:19)।' लेकिन रमज़ान में विशेष रूप से हर मुसलमान को ढाई किलो गेहूं या चावल निर्धनों के लिए निकालना अनिवार्य कर दिया गया और रोज़ा को पवित्र करने के लिए इसे आवश्यक क़रार दिया गया ताकि कोई भी निर्धन भूखा न रह जाए।

विचार कीजिए कि यदि एक महीने तक सुबह से शाम तक स्वयं पर नियंत्रण रखकर धैर्य के साथ एक विशेष समय तक इन तीनों बुनियादी इच्छाओं की अनिवार्य और वैध ज़रूरतें भी पूरी न की जाएँ, तो सामान्य दिनों में इन तीनों ज़रूरतों को अपनी सीमाओं में रखने में कोई कठिनाई नहीं होगी; इंसान, इंसान बना रहेगा और समाज अन्याय और अत्याचार से मुक्त रहेगा।

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) का कथन है–'अल्लाह ने सदक़ा-ए-फ़ित्र इसलिए अनिवार्य किया ताकि वह रोज़ादार को व्यर्थ और अश्लील बातों से पवित्र करे और निर्धनों के खाने का प्रबंध हो जाए (हदीस : अबू-दाऊद)।' इसके अलावा 'ज़कात' है, जिसे लोग आम तौर पर रमज़ान में ही निकालते हैं। इसमें हर सक्षम व्यक्ति को अपने धन पर कम से कम ढाई प्रतिशत निकालना अनिवार्य है। यह सब इसीलिए किया गया है कि समाज में कोई ग़रीब भूखा न सोए और सबकी रोज़ी-रोटी का प्रबंध हो जाए।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि रोज़ा ईश्वर की ओर से एक बड़ी नेमत है। यह एक ओर तो इंसान के भीतर धैर्य और 'तक़वा' जैसे गुण पैदा करके उच्च चरित्र वाला इंसान बनाता है, और दूसरी ओर ग़रीबों के प्रति उसके भीतर सहानुभूति और त्याग की भावना पैदा करता है ताकि समाज में कोई भूखा न रहे। अर्थात् वास्तव में यह इंसान को इंसान बनाने का महीना है। ■■



"जब इन्सान मर जाता है
तो उसके कर्मों का सिलसिला टूट जाता
है। अलबत्ता तीन चीज़ें ऐसी हैं जो इससे
अलग हैं—जारी रहने वाला सदक़ा या
ज्ञान जिससे फ़ायदा उठाया जाए, या नेक
सन्तान जो उसके लिए दुआ करे।"
(हदीस: मुस्लिम)

A Well Wisher

J.I.H.
Vapi (Gujrat)

रमज़ान : दान, प्रतिदान और क्षमादान का महीना

❖सुफ़ियान अहमद

रमज़ान इंसान के भीतर छिपी हुई अच्छाइयों को जगाने का पाक महीना है। ऐसे समय में, जब दुनिया स्वार्थ, प्रतिस्पर्धा और उपभोग की अंधी दौड़ में मानवीय मूल्यों को पीछे छोड़ चुकी है, रमज़ान इंसान को ठहरकर सोचने, अपने भीतर झांकने और दूसरों के दुख को महसूस करने का नैतिक अभ्यास कराता है। यह महीना हमें याद दिलाता है कि वास्तविक समृद्धि संग्रह में नहीं, बल्कि बांटने में है; वास्तविक सफलता लेने में नहीं, बल्कि लौटाने में है; और वास्तविक श्रेष्ठता बदला लेने में नहीं, बल्कि माफ़ कर देने में है।

रमज़ान के महीने में जागृत हुई यह नैतिक चेतना दान, प्रतिदान और क्षमादान के रूप में मूर्त होने लगती है। दान से समाज समानता की दिशा में आगे बढ़ता है, प्रतिदान से नैतिक उत्तरदायित्व की भावना सुदृढ़ होती है और क्षमादान से दिलों की कठोरता पिघलती है। रमज़ान इन तीनों मूल्यों को एक साथ साधने का प्रशिक्षण देता है—व्यक्ति के स्तर पर भी और समाज के स्तर पर भी। यदि इस महीने को इसकी वास्तविक कसौटी के साथ आत्मसात किया जाए, तो यह न केवल व्यक्ति के नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास का साधन बन सकता है, बल्कि एक ऐसे मानवीय समाज का निर्माण कर सकता है जो हर प्रकार से सशक्त और समृद्ध हो।

वर्तमान समय में मानव समाज उपभोक्तावादी अपसंस्कृति के मोहपाश में इस क़दर जकड़ा जा चुका है कि चरित्र, नैतिकता और आत्मिक मूल्यों का क्षरण एक सामान्य घटना बन गई है। सुख की परिभाषा भोग में, सफलता की कसौटी संग्रह में और प्रतिष्ठा का पैमाना प्रदर्शन में बदल चुका है। इस अंधी दौड़ में मनुष्य अपनी आत्मा, विवेक और उत्तरदायित्व—सब कुछ खोता जा रहा है।

ऐसे विकृत और असंतुलित वातावरण में यदि कोई शक्ति मनुष्य को पतन के गर्त में गिरने से रोक सकती है, तो वह है ईशपरायणता (तक़वा) और उसका व्यावहारिक प्रशिक्षण—रोज़ा।

रोज़ा : आत्म अनुशासन और चरित्र निर्माण

रोज़ा केवल भूखा-प्यासा रहने का नाम नहीं है, बल्कि यह मनुष्य के भीतर ईशपरायणता विकसित करने का अत्यंत प्रभावी साधन है। रोज़ा आत्मा को प्रशिक्षित करता है, इच्छाओं को नियंत्रित करता है और चरित्र को दृढ़ करता है। इसके माध्यम से इंसान में आज्ञापालन, अनुशासन, नम्रता, विनयशीलता, सत्यप्रियता, संयम, धैर्य, सहनशीलता, सहानुभूति, सदाचार, परोपकार, त्याग, नैतिकता, दयालुता और दानशीलता जैसे श्रेष्ठ मानवीय गुण विकसित होते हैं। इन्हीं गुणों के आधार पर एक सुंदर, सुव्यवस्थित और चरित्रवान समाज की नींव रखी जाती है। इस प्रकार रोज़ा कुप्रवृत्तियों और बुराइयों के विरुद्ध एक निरंतर आत्मिक संघर्ष (जिहाद) है, जो इंसानी भाईचारे को बढ़ावा देता है और कल्याणकारी व समतामूलक समाज का निर्माण करता है।

ऐसे समय में, जब दुनिया स्वार्थ, प्रतिस्पर्धा और उपभोग की अंधी दौड़ में मानवीय मूल्यों को पीछे छोड़ चुकी है, रमज़ान इंसान को ठहरकर सोचने, अपने भीतर झाँकने और दूसरों के दुख को महसूस करने का नैतिक अभ्यास कराता है। यह महीना हमें याद दिलाता है कि वास्तविक समृद्धि संग्रह में नहीं, बल्कि बाँटने में है; वास्तविक सफलता लेने में नहीं, बल्कि लौटाने में है; और वास्तविक श्रेष्ठता बदला लेने में नहीं, बल्कि माफ़ कर देने में है।

रोज़े की समझ

हमारे सामने एक गंभीर प्रश्न यह है कि क्या हम रोज़े को उसकी मूल आत्मा के साथ आत्मसात कर रहे हैं ?

उत्तर यदि 'हां' है, तो यह अत्यंत शुभ संकेत है। किंतु यदि उत्तर 'नहीं' है, तो यह आत्म-मंथन का समय है। हमें चाहिए कि हम रोज़े को उसके नैतिक और आत्मिक उद्देश्य

के साथ अपने भीतर पूरी निष्ठा से उतारने का प्रयास करें। अन्यथा केवल रस्मों तक सीमित रह जाने वाला यह अमल समाज को भी उसी पतन की ओर ले जाएगा, जिससे बचने के लिए रोज़ा फ़र्ज़ किया गया है।

क़ुरआन में रोज़े के लिए 'सौम' शब्द का प्रयोग हुआ है, जिसका अर्थ है—रुक जाना, बचना और परहेज़ करना। रोज़े की अवस्था में रोज़ेदार केवल खाने-पीने और वैध शारीरिक संबंधों से ही नहीं रुकता, बल्कि हर प्रकार की बुराई से भी स्वयं को दूर रखता है। वास्तविक और सफल रोज़ेदार वही है, जो बुरे कर्मों से अस्थायी नहीं, बल्कि स्थायी रूप से दूरी बना ले। इसी उद्देश्य से रोज़े को फ़र्ज़, अर्थात् अनिवार्य और अपरिहार्य घोषित किया गया है।

क़ुरआन में स्पष्ट कहा गया है–"ऐ ईमान लाने वालो! तुम पर रोज़े अनिवार्य किए गए हैं, जिस प्रकार तुमसे पहले के लोगों पर किए गए थे, ताकि तुम ईशपरायण बन जाओ।"

(क़ुरआन, 2:183)

रमज़ान के महीने में जागृत हुई यह नैतिक चेतना दान, प्रतिदान और क्षमादान के रूप में मूर्त होने लगती है। दान से समाज समानता की दिशा में आगे बढ़ता का है, प्रतिदान से नैतिक उत्तरदायित्व की भावना सुदृढ़ होती है और क्षमादान से दिलों की कठोरता पिघलती है। रमज़ान इन तीनों मूल्यों को एक साथ साधने का प्रशिक्षण देता है–व्यक्ति के स्तर पर भी और समाज के स्तर पर भी।

रमज़ान : क़ुरआन, रहमत और बरकत का महीना

रमज़ान वह पवित्र महीना है, जिसमें मानवता के मार्गदर्शन के लिए क़ुरआन का अवतरण आरंभ हुआ। यह महीना इबादत, रहमत और बरकत का प्रतीक है। क़ुरआन स्वयं इसकी घोषणा करता है–

"रमज़ान वह महीना है, जिसमें क़ुरआन उतारा गया, लोगों के मार्गदर्शन के लिए और सत्य-असत्य के अंतर के प्रमाणों के साथ।" (क़ुरआन, 2:185)

इस महीने में हर नेकी का प्रतिदान कई गुना बढ़ा दिया जाता है। शैतानी प्रवृत्तियों पर नियंत्रण होता है, जन्नत के द्वार खोले जाते हैं और रहमत की जीवनदायी वर्षा नेक बंदों पर निरंतर होती रहती है।

रोज़ा और सामाजिक न्याय की अवधारणा

रमज़ान केवल आत्म-शुद्धि का नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और आर्थिक संतुलन का भी महीना है। सदक़ा-ए-फ़ित्र और ज़कात (आर्थिक रूप से सक्षम लोगों द्वारा दिया जाने वाला अनिवार्य दान) के माध्यम से समाज के कमज़ोर वर्गों को सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अवसर दिया जाता है। ईद से पहले फ़ितरा अदा करने का उद्देश्य यही है कि कोई भी व्यक्ति ख़ुशी के इस अवसर से वंचित न रहे।

इस बारे में हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने फ़रमाया– "फ़ितरा रोज़ेदार की उन कमियों का कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) है, जो उससे रोज़े में हो गई हों, और यह ग़रीबों के भोजन का प्रबंध है।" (हदीस : अबू-दाऊद)

क़ुरआन का अवतरण

मानवजाति के लिए अंतिम और सार्वभौमिक मार्गदर्शन के रूप में क़ुरआन का अवतरण 17 अगस्त 610 ई. से आरंभ हुआ। परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार फ़रिश्ते जिबरील (अलैहि.) के माध्यम से आयतें उतरती रहीं। मार्च 632 ई. में संपूर्ण क़ुरआन अवतरित (नाज़िल) हो गया, जिसमें 114 सूरह सम्मिलित हैं। 90 मक्का में और 24 मदीना में अवतरित हुईं।

रोज़े का मूल उद्देश्य

हर इन्सान जीवन में सफलता चाहता है। रोज़ा वह अमल है, जो इन्सान को लोक और परलोक, दोनों में सफलता की राह दिखाता है। यह मनुष्य की ज्ञानेंद्रियों को बुराई से रोककर सत्य की ओर मोड़ता है और उसके भीतर ईशपरायणता, परहेज़गारी तथा त्याग की भावना को प्रबल करता है।

रोज़ा उपासना, जनसेवा और मानव कल्याण का समन्वित रूप है। यदि हम इसकी आत्मा को अपने जीवन में उतार लें, तो हमारा विचार बदलेगा, आदतें बदलेंगी, आचरण और व्यवहार में परिवर्तन आएगा। हमारी पसंद-नापसंद के पैमाने बदलेंगे और अंततः समाज बदलेगा।

रोज़े का मूल उद्देश्य भलाई को फैलाना और बुराई को मिटाना है। जो व्यक्ति रोज़ा रखने के बावजूद बुराई में लिप्त रहता है, उसे भूख और प्यास के अतिरिक्त कुछ प्राप्त नहीं होता। यदि हम रोज़े की रूह को समझकर उसे जीवन का स्थायी मूल्य बना लें, तो एक शांत, न्यायपूर्ण और करुणामय मानव समाज का निर्माण संभव है—यही रोज़े का अंतिम और सर्वोच्च उद्देश्य है। ■■

रोज़े की अवधारणा : विभिन्न धर्मों में

❖डॉ. मुहम्मद इक़बाल सिद्दीक़ी

पवित्र क़ुरआन का यह कथन कि "तुम पर रोज़े फ़र्ज़ किए गए हैं, जिस तरह तुमसे पहले के लोगों पर फ़र्ज़ किए गए थे", केवल एक धार्मिक आदेश नहीं, बल्कि मानव इतिहास में ईश्वरीय मार्गदर्शन की निरंतरता का गहन दार्शनिक उद्घोष है। यह स्पष्ट करता है कि उपवास कोई आकस्मिक या सांस्कृतिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि शुरू से ही मनुष्य की नैतिक संरचना को गढ़ने वाला एक सार्वभौमिक साधन रहा है। क़ुरआन के अनुसार, इस्लाम मानवता के लिए ईश्वर की ओर से भेजा गया पहला मार्गदर्शन नहीं, बल्कि उसका अंतिम, संरक्षित और संतुलित रूप है, इसलिए वह पूर्ववर्ती धार्मिक परंपराओं में पाए जाने वाले उपवास को दिव्य योजना की कड़ियों के रूप में स्वीकार करता है।

क़ुरआन के अनुसार, इस्लाम मानवता के लिए ईश्वर की ओर से भेजा गया पहला मार्गदर्शन नहीं, बल्कि उसका अंतिम, संरक्षित और संतुलित रूप है, इसलिए वह पूर्ववर्ती धार्मिक परंपराओं में पाए जाने वाले उपवास को दिव्य योजना की कड़ियों के रूप में स्वीकार करता है।

इस व्यापक दृष्टि में रोज़ा या उपवास केवल भूख-प्यास का नाम नहीं, बल्कि इच्छाओं पर नियंत्रण का प्रशिक्षण है। भोजन, वासना, धन और सत्ता जैसी स्वाभाविक प्रवृत्तियां जब अनियंत्रित हो जाती हैं, तो अन्याय और शोषण को जन्म देती हैं। उपवास मनुष्य को यह व्यावहारिक अनुभव कराता है कि इच्छा पर नियंत्रण संभव है, और यही अनुभव उसे नैतिक स्वतंत्रता की ओर ले जाता है।

यहूदी धर्म में उपवास

यहूदी धर्म में उपवास (Ta'anit या Tzom) एक धार्मिक अभ्यास है, जो तोरात और बाद की रब्बी परंपराओं पर आधारित है। उपवास का उद्देश्य व्यक्ति को सांसारिक सुखों से अलग कर आत्म-परीक्षण और पश्चाताप की ओर ले जाना है। यह उपवास सामूहिक होता है और यह एहसास कराता है कि नैतिक पतन या ऐतिहासिक त्रासदी केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामूहिक ज़िम्मेदारी है।

उपवास का स्वरूप

यहूदी परंपरा में उपवास मुख्यतः तीन श्रेणियों में विभाजित हैं :

1. पूर्ण उपवास (Major Fasts) : ये उपवास सूर्यास्त से अगले सूर्यास्त तक, लगभग 25 घंटे चलते हैं। सबसे महत्वपूर्ण है योम किप्पुर — प्रायश्चित का दिन। इसे यहूदी वर्ष का सबसे पवित्र दिन माना जाता है। इस दिन पूरे समुदाय द्वारा सामूहिक रूप से पापों का प्रायश्चित किया जाता है।

दूसरा प्रमुख उपवासतिशा बी'आव है, जो यरुशलम की पहली और दूसरी इबादतगाहों के विनाश की स्मृति में रखा जाता है। यह उपवास धार्मिक के साथ ऐतिहासिक और राष्ट्रीय शोक का दिन है।

2. लघु उपवास (Minor Fasts) : ये उपवास सूर्योदय से सूर्यास्त तक चलते हैं। इनमें गेदालिया का उपवास, दस तेवेत, एस्तेर का उपवास और सत्रह तम्मूज़ शामिल हैं। ये सभी किसी न किसी ऐतिहासिक त्रासदी या नैतिक संकट की स्मृति से जुड़े हैं।

3. निजी या वैकल्पिक उपवास : कुछ उपवास व्यक्तिगत पश्चाताप, बुरे स्वप्न या विशेष संकट की स्थिति में रखे जाते हैं। ये अनिवार्य नहीं होते, लेकिन धार्मिक रूप से मान्य हैं।

शब्बत (सब्त, शनिवार) के दिन सामान्यतः उपवास निषिद्ध है, क्योंकि वह आनंद और विश्राम का दिन माना जाता है। केवल योम किप्पुर इस नियम का अपवाद है। अनिवार्यता और छूट।

यहूदी क़ानून (हलाख़ा) के अनुसार, सभी स्वस्थ

वयस्कों पर उपवास अनिवार्य है। बीमार, गर्भवती, वृद्ध और कमज़ोर व्यक्तियों को छूट दी जाती है। यदि उपवास से जीवन को ख़तरा हो, तो उपवास तोड़ना धार्मिक कर्तव्य माना जाता है।

निषेध और अनुमतियां

पूर्ण उपवासों में भोजन और पानी के साथ-साथ स्नान, चमड़े के जूते, सुगंध, तेल लगाना और दांपत्य संबंध निषिद्ध होते हैं। लघु उपवासों में केवल भोजन और पानी निषिद्ध है।

उपवास के कारण

प्रत्येक यहूदी उपवास किसी विशिष्ट ऐतिहासिक या नैतिक कारण से जुड़ा है — यहूदी इबादतगाहों का विनाश, घेराबंदी, नेतृत्व की हत्या या सामूहिक संकट। इन उपवासों के माध्यम से इतिहास को केवल याद नहीं किया जाता, बल्कि उससे नैतिक शिक्षा भी ग्रहण की जाती है।

ईसाई धर्म में उपवास

ईसाई धर्म में उपवास (Fasting) एक महत्वपूर्ण आध्यात्मिक अनुशासन है, जिसकी जड़ें बाइबिल के पुराने और नए नियम—दोनों में मिलती हैं। इसका मूल उद्देश्य आत्म-विनम्रता, अहंकार का क्षय और ईश्वर पर पूर्ण निर्भरता है। बाइबिल में इसे "अपने-आपको दीन करना" कहा गया है। इसकी मुख्य प्रेरणा यीशु मसीह (उन पर शांति हो) का रेगिस्तान में किया गया 40 दिवसीय उपवास है, जो आत्म-संयम और प्रलोभनों पर विजय का प्रतीक है।

उपवास का स्वरूप

ईसाई धर्म में उपवास का स्वरूप विभिन्न संप्रदायों में भिन्न है। इसे मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में समझा जा सकता है।

पहली श्रेणी : चर्च-निर्धारित उपवास

कैथोलिक और ईस्टर्न ऑर्थोडॉक्स चर्चों में उपवास संगठित और विधिसम्मत है। सबसे महत्वपूर्ण काललेंट (Lent) है, जो ईस्टर से पहले लगभग 40 दिनों तक चलता है। यह काल यीशु के 40 दिनों के उपवास की स्मृति में मनाया जाता है।

➢कैथोलिक परंपरा में Ash Wednesday और Good Friday को सख़्त उपवास का दिन माना जाता है— जहां भोजन सीमित होता है और मांस का त्याग अनिवार्य होता है।

➢ईस्टर्न ऑर्थोडॉक्स चर्च में Great Lent अत्यंत कठोर होता है, जिसमें मांस, डेयरी, अंडे, कभी-कभी तेल और शराब आदि से परहेज़ किया जाता है।

दूसरी श्रेणी: नियमित या आंशिक उपवास

कुछ चर्चों में सप्ताह के विशेष दिनों (जैसे बुधवार और शुक्रवार) को उपवास या संयम का दिन माना जाता है।

तीसरी श्रेणी : व्यक्तिगत और स्वैच्छिक उपवास

प्रोटेस्टेंट परंपराओं में उपवास अधिकतर व्यक्तिगत निर्णय पर आधारित होता है। व्यक्ति प्रार्थना, पश्चाताप या किसी विशेष निर्णय से पहले उपवास रख सकता है। यहां नियमों से अधिक नीयत को महत्व दिया जाता है।

अनिवार्यता और छूट

ईसाई धर्म में उपवास की अनिवार्यता संप्रदाय पर निर्भर करती है।

➢कैथोलिक चर्च में कुछ विशेष दिनों पर उपवास बाध्यकारी है, विशेषकर स्वस्थ वयस्कों के लिए।

➢ईस्टर्न ऑर्थोडॉक्स परंपरा में उपवास अधिक नियमित और व्यापक है।

➢प्रोटेस्टेंट परंपराओं में यह सामान्यतः अनिवार्य नहीं, बल्कि आध्यात्मिक अनुशासन के रूप में प्रोत्साहित किया जाता है।

बीमार, गर्भवती, वृद्ध और बच्चों को सामान्यतः छूट दी जाती है। यहां भी स्वास्थ्य और जीवन की रक्षा को सर्वोपरि माना गया है।

निषेध और अनुमतियां

ईसाई उपवास में सामान्यतः मांसाहार, विलासिता और अत्यधिक भोजन से परहेज़ किया जाता है। कुछ परंपराओं में डेयरी और तेल भी निषिद्ध होते हैं। पानी, दवा और आवश्यक पोषण की अनुमति रहती है। यह स्पष्ट करता है कि ईसाई उपवास का उद्देश्य आत्म-नियंत्रण है, न कि शरीर को



Whatsapp (9818799223) your complete address with screenshot of payment

नुक़सान पहुंचाना।

उपवास के कारण

ईसाई परंपरा में उपवास कई उद्देश्यों के लिए किया जाता है–

➢पापों के लिए पश्चाताप

➢प्रार्थना की गहनता

➢आत्म-नियंत्रण का विकास

➢यीशु मसीह के जीवन और त्याग का अनुकरण

➢सामूहिक रूप से चर्च को नैतिक आत्म-परीक्षण की ओर ले जाना।

इस प्रकार, ईसाई उपवास भी उसी व्यापक नैतिक परंपरा का हिस्सा है, जिसकी ओर क़ुरआन "तुम से पहले वालों" कहकर संकेत करता है।

हिंदू धर्म में उपवास

हिंदू धर्म में "उपवास" शब्द स्वयं 'उप' (समीप) और 'वास' (निवास) से मिलकर बना है—अर्थात् ईश्वर के समीप निवास करना। सामान्यतः व्रत या उपवास बहुरूपी और लचीली धार्मिक परंपरा है। यह आध्यात्मिक साधना और आत्म-अनुशासन का माध्यम है। उपवास का उद्देश्य मन और इंद्रियों पर नियंत्रण स्थापित करना है। यह माना जाता है कि भोजन और भोग-विलास इंद्रियों को उग्र बनाते हैं, जबकि संयम उन्हें शांत करता है। उपवास शारीरिक-मानसिक शुद्धि का साधन भी है। आयुर्वेदिक दृष्टि से यह पाचन तंत्र को विश्राम देता है और मन को एकाग्र बनाता है।

उपवास का स्वरूप

हिंदू धर्म में उपवास के स्वरूप अत्यंत विविध हैं। इन्हें दो आधारों पर समझा जा सकता है—भोजन के प्रकार के आधार पर और उद्देश्य के आधार पर।

भोजन के आधार पर

➢**निर्जला उपवास :** पूर्ण निराहार, जैसे निर्जला एकादशी।

➢**फलाहार :** फल, दूध और सात्विक भोजन तक सीमित।

➢**एकभुक्त :** दिन में केवल एक बार भोजन।

➢**रसोपवास :** केवल दूध या तरल पदार्थ।

उद्देश्य के आधार पर

➢**नित्य व्रत :** नैतिक और अनुशासनात्मक नियम, जैसे सत्य बोलना, संयम रखना।

➢**नैमित्तिक व्रत :** विशेष परिस्थितियों या शुद्धि के लिए।

➢**काम्य व्रत :** मनोकामना की पूर्ति के लिए।

➢**निष्काम व्रत :** केवल भक्ति और साधना के लिए, बिना किसी सांसारिक अपेक्षा के।

एकादशी, नवरात्रि, महाशिवरात्रि, श्रावण सोमवार, जन्माष्टमी जैसे व्रत हिंदू समाज में व्यापक रूप से प्रचलित हैं।

अनिवार्यता और छूट

हिंदू धर्म में उपवास सार्वभौमिक रूप से अनिवार्य नहीं है। यह व्यक्ति के संकल्प, पारिवारिक परंपरा और आध्यात्मिक प्रवृत्ति पर निर्भर करता है।

बच्चों, बीमारों, गर्भवती महिलाओं और वृद्धों को स्पष्ट छूट दी जाती है। यदि संकल्प लेने के बाद व्रत किसी कारणवश टूट जाए, तो प्रायश्चित या पुनः व्रत का विकल्प दिया गया है—जो इस परंपरा की मानवीय लचीलापन दर्शाता है।

निषेध और अनुमतियां

हिंदू उपवास में सामान्यतः तामसिक और राजसिक भोजन—मांस, मदिरा, लहसुन, प्याज—से परहेज़ किया जाता है। क्रोध, झूठ, हिंसा और असंयम को भी व्रत-भंग माना जाता है।

अनुमतियों में सात्विक भोजन, पूजा, जप, ध्यान और धार्मिक पाठ शामिल हैं। यह दर्शाता है कि यहां भी उपवास का केंद्र भोजन नहीं, बल्कि नैतिक आचरण है।

उपवास के कारण

हिंदू धर्म में उपवास कई कारणों से किया जाता है–

➢ईश्वर की भक्ति और कृपा प्राप्ति

➢आत्म-नियंत्रण और साधना

➢मनोकामना पूर्ति

➢पाप निवारण और शुद्धि

➢ऋतु और तिथि के अनुसार शरीर-मन का संतुलन

इस प्रकार, हिंदू धर्म में उपवास के रूप में संयम को आत्मोन्नति का मार्ग माना गया है।

जैन धर्म में उपवास

जैन दर्शन में उपवास का मूल उद्देश्य कर्मों का क्षय है। माना जाता है कि भोग और आसक्ति नए कर्मों को जन्म देते हैं, जबकि उपवास और संयम पुराने कर्मों को नष्ट करते हैं। जैन दर्शन अहिंसा को सर्वोच्च मूल्य मानता है, और

उपवास को कर्म-निर्जरा (पाप कर्मों के क्षय), आत्म-शुद्धि और मोक्ष प्राप्ति का सबसे प्रभावी साधन समझता है। अहिंसा यहां केवल शारीरिक हिंसा से बचने तक सीमित नहीं, बल्कि सूक्ष्म जीवों की रक्षा तक विस्तृत है। इसलिए रात्रि भोजन का त्याग, जड़ वाली सब्जियों से परहेज़ और उबले पानी का प्रयोग—ये सब उपवास की ही व्यापक नैतिक संरचना का हिस्सा हैं।

उपवास का स्वरूप

जैन धर्म में उपवास के स्वरूप अत्यंत विविध और कई बार अत्यंत कठोर होते हैं। प्रमुख रूप इस प्रकार हैं :

➢**उपवास (सामान्य) :** एक दिन या उससे अधिक का भोजन त्याग।

➢**चौविहार उपवास :** पूर्ण निर्जला उपवास—न भोजन, न पानी।

➢**तिविहार उपवास :** भोजन त्याग, लेकिन उबला पानी सीमित मात्रा में अनुमत।

➢**एकासना और बियासना :** दिन में एक या दो बार भोजन।

➢**अयम्बिल :** एक बार अत्यंत सादा भोजन—बिना नमक, तेल, मसाले।

➢**अट्ठई, नवई और मासखमण :** कई दिनों या महीनों तक चलने वाले दीर्घ उपवास।

➢**सल्लेखना (संथारा) :** जीवन के अंतिम चरण में धीरे-धीरे भोजन और जल का त्याग—इसे शांत चित्त से मृत्यु को स्वीकार करने की आध्यात्मिक तैयारी माना जाता है।

पर्युषण पर्व के दौरान सामूहिक उपवास जैन समाज में अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

अनिवार्यता, छूट और निषेध

जैन धर्म में उपवास सार्वभौमिक रूप से अनिवार्य नहीं है; यह व्यक्तिगत संकल्प पर आधारित है। साधु-साध्वियों के लिए नियम अत्यंत कठोर हैं, जबकि गृहस्थों के लिए क्षमता और स्वास्थ्य के अनुसार। बच्चों, बीमारों, गर्भवती और वृद्ध व्यक्तियों को छूट दी जाती है—क्योंकि अहिंसा में स्वयं के जीवन की रक्षा भी शामिल है। जैन उपवास में निषेध केवल भोजन तक सीमित नहीं, बल्कि क्रोध, झूठ, हिंसा, असंयम और विलासिता तक विस्तृत है।

बौद्ध धर्म में उपवास

बौद्ध धर्म में उपवास की अवधारणा जैन धर्म से भिन्न है। बुद्ध ने स्वयं छह वर्षों तक अत्यंत कठोर तपस्या की थी, लेकिन अनुभव के आधार पर उसे अस्वीकार कर दिया। इसके बाद उन्होंने मध्यम मार्ग का सिद्धांत प्रस्तुत किया—जिसमें न भोग की अति है, न तप की। बौद्ध दृष्टि में उपवास मन को स्पष्ट और शांत करने का उपाय है। बुद्ध का मानना था कि अत्यधिक भूख ध्यान में बाधा बनती है। संयमित भोजन और सीमित उपवास से इंद्रियों पर नियंत्रण होता है, जिससे ध्यान और प्रज्ञा (wisdom) का विकास होता है तथा करुणा और अहिंसा की प्रेरणा मिलती है।

उपवास का स्वरूप

बौद्ध धर्म में उपवास मुख्यतः संयम के रूप में दिखाई देता है।

➢**भिक्षु और भिक्षुणियों के लिए :** विनय नियम के अनुसार दोपहर के बाद ठोस भोजन निषिद्ध है। यह नियम प्रतिदिन लागू होता है।

➢**गृहस्थों के लिए :** उपोसथ के दिनों में अट्ठशील (आठ शील) का पालन किया जाता है, जिसमें दोपहर बाद भोजन त्याग, मनोरंजन से परहेज़ और ब्रह्मचर्य शामिल है।

➢कुछ महायान और वज्रयान परंपराओं में सीमित अवधि के उपवास भी मिलते हैं, लेकिन अत्यधिक निर्जला तपस्या को बुद्ध ने अस्वीकार किया।

अनिवार्यता और कारण

भिक्षुओं के लिए दोपहर बाद भोजन त्याग अनिवार्य है, लेकिन गृहस्थों के लिए उपवास स्वैच्छिक है।

उपवास के प्रमुख कारण हैं–

➢इंद्रिय-निग्रह

➢ध्यान की स्पष्टता

➢अहिंसा

➢लोभ, द्वेष और मोह का क्षय

इस प्रकार बौद्ध उपवास भी उसी सार्वभौमिक नैतिक उद्देश्य की पूर्ति करता है, जिसे अन्य धर्म अलग-अलग रूपों में प्रस्तुत करते हैं।

इस्लाम में रोज़ा

इन सभी परंपराओं के तुलनात्मक अध्ययन के बाद इस्लाम का रोज़ा एक संतुलित, स्पष्ट और नैतिक रूप से समग्र व्यवस्था के रूप में सामने आता है।

रमज़ान के महीने में रोज़ा (सौम) रखना इस्लाम के पांच स्तंभों में से एक है और हर मानसिक एवं शारीरिक रूप से

सक्षम, वयस्क मुसलमान पर अनिवार्य है।

रोज़े का स्वरूप

रमज़ान में रोज़ा सुबह पौ फटने से सूर्यास्त तक रखा जाता है। इस दौरान :

➢भोजन और पानी, धूम्रपान आदि से परहेज़

➢यौन संबंधों से विरति

इसके अलावा रोज़े की हालत में झूठ, गाली, धोखा, अन्याय और झगड़ा भी रोज़े की रूह के विरुद्ध हैं। इस प्रकार रोज़ा केवल शरीर का नहीं, बल्कि व्यवहार और नीयत का भी उपवास है।

अनिवार्यता और छूट

इस्लाम में रोज़ा अनिवार्य है, लेकिन कुछ परिस्थितियों में छूट भी दी गई है। बीमार, यात्री, गर्भवती, स्तनपान कराने वाली महिलाएं और वृद्ध व्यक्ति रोज़े से मुक्त हैं, बशर्ते वे बाद में क़ज़ा रखें या फ़िदया दें। आम तौर पर एक रोज़े का फ़िदया एक मिस्कीन को खाना खिलाना है। यह सिद्धांत इस्लाम को कठोर तपस्या से अलग करता है और उसे मानव-केंद्रित नैतिक व्यवस्था बनाता है।

रोज़े का उद्देश्य

इस्लामी दृष्टि में रोज़े का केंद्रीय उद्देश्य तक़वा—ईश-भय और परहेज़गारी—का विकास है।

इसके साथ-साथ :

➢ग़रीबों और भूखों की पीड़ा का एहसास

➢आत्म-नियंत्रण

➢सामाजिक समानता

➢सामूहिक नैतिक प्रशिक्षण

फ़ितरा (ईद से पहले दिया जाने वाला अनिवार्य दान) के साथ रोज़ा सामाजिक न्याय की भावना को सुदृढ़ करता है। अधिकांश लोग इसी महीने में ज़कात भी अदा करते हैं।

उपभोगवादी युग में उपवास का महत्व

आधुनिक युग उपभोग, अति और असंतुलन का युग है। इच्छाओं को सीमित करने का विचार आज अप्रासंगिक समझा जाता है। ऐसे समय में रोज़ा या उपवास एक नैतिक प्रतिरोध के रूप में सामने आता है। रोज़ा हमें सिखाता है कि हर इच्छा को पूरा करना स्वतंत्रता नहीं, बल्कि 'स्वयं' की ग़ुलामी है। संयम (व्यापक रूप में 'तज़्किया'—शुद्ध करना) मनुष्य को न केवल आध्यात्मिक, बल्कि मानसिक और सामाजिक रूप से भी सक्षम बनाता है।

रोज़ा : ईश्वरीय मार्गदर्शन की नैतिक अभिव्यक्ति

उपवास मानव इतिहास में ईश्वरीय मार्गदर्शन की नैतिक अभिव्यक्ति है। यहूदी धर्म में यह पश्चाताप और ऐतिहासिक स्मृति है, ईसाई धर्म में आत्म-विनम्रता और यीशु का अनुकरण, हिंदू धर्म में साधना और इंद्रिय-निग्रह, जैन धर्म में तप और कर्म-निर्जरा, बौद्ध धर्म में मध्यम मार्ग और मानसिक स्पष्टता और इस्लाम में इन सबका संतुलित, स्पष्ट और सामाजिक रूप से उत्तरदायी समन्वय।

क़ुरआन जब कहता है कि रोज़ा पहले भी अनिवार्य किया गया था, तो वह केवल इतिहास नहीं बताता—वह यह स्थापित करता है कि हर युग में नैतिक अनुशासन मानव जीवन के लिए अनिवार्य है। आज के असंतुलित, हिंसक और उपभोग-प्रधान युग में उपवास हमें यह याद दिलाता है कि संयम कमज़ोरी नहीं, बल्कि नैतिक और आत्मिक शक्ति है। ■■

माहे रमज़ान

• ज़हीर ललितपुरी •

कितना पावन महीना है रमज़ान का।
दौर आया है शुक्र[1] और एहसान[2] का।।

किस क़दर बरकतें[3] ले के आता है ये।
दिल से स्वागत करें अपने मेहमान का।।

रात दिन हर घड़ी हम इबादत करें।
है तक़ाज़ा यही रब के फ़रमान[4] का।।

इस महीने में क़ुरआन नाज़िल[5] हुआ।
ये निराला करिश्मा है रहमान का।।

उसकी हर एक आयत समझ कर पढ़ें।
हक़ अदा होगा इस तरह क़ुरआन का।।

बरगलाएगा शैतान कैसे हमें।
दिल में जब तक उजाला है ईमान का।।

ख़िदमत-ए-ख़ल्क़[6] भी आप कीजे ज़हीर।
ये फ़रीज़ा[7] है हर इक मुसलमान का।।

.....

मायने : 1. ईश्वर का आभार 2. भलाई 3. तरक़्क़ी, बढ़ोत्तरी 4. हुक्म 5. अवतरित 6. इंसानियत और सृष्टि की सेवा 7. कर्तव्य

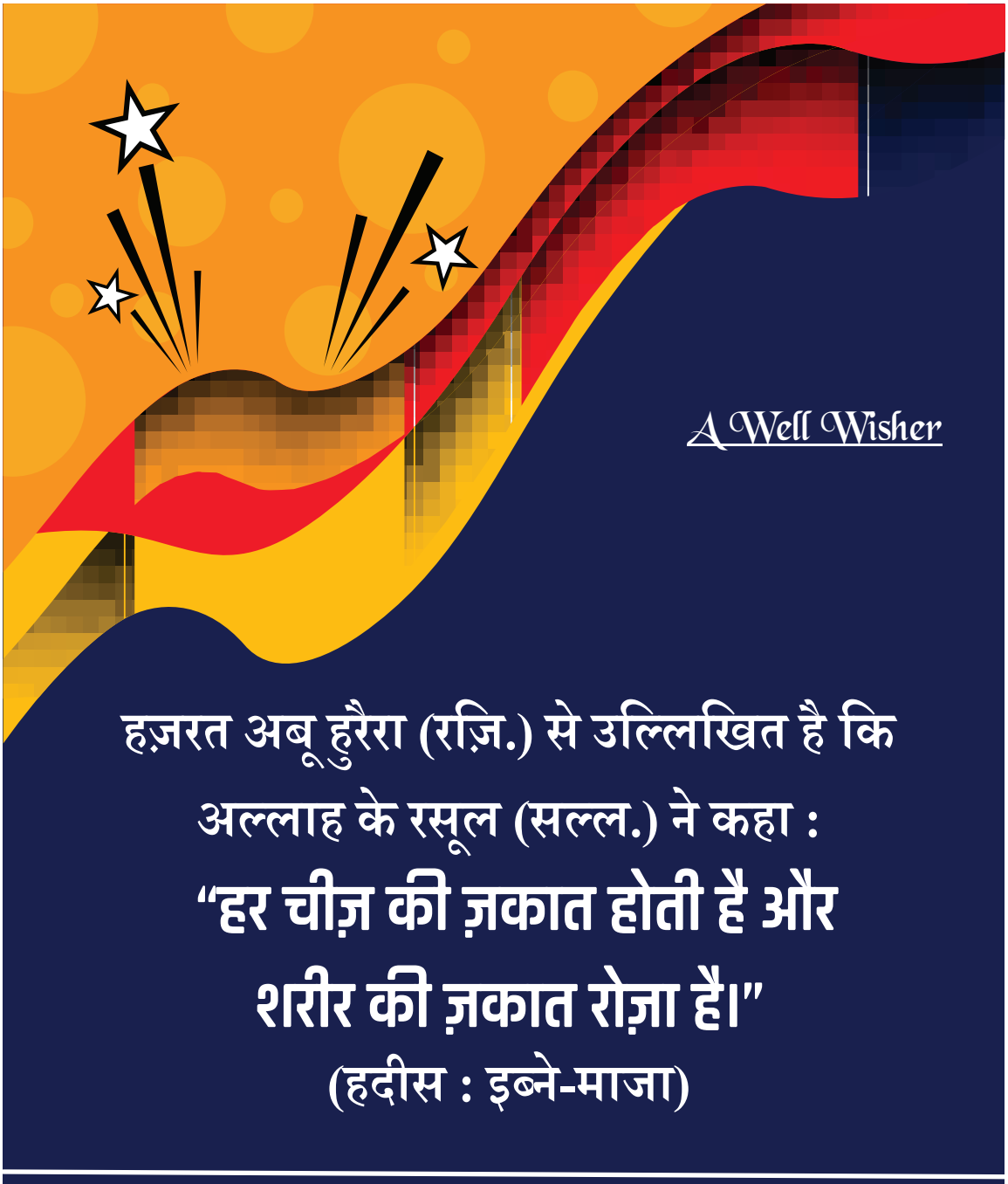

A Well Wisher

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि.) से उल्लिखित है कि
अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा :
"हर चीज़ की ज़कात होती है और
शरीर की ज़कात रोज़ा है।"
(हदीस : इब्ने-माजा)

Ashfaque Syed
Poona (M.H.)

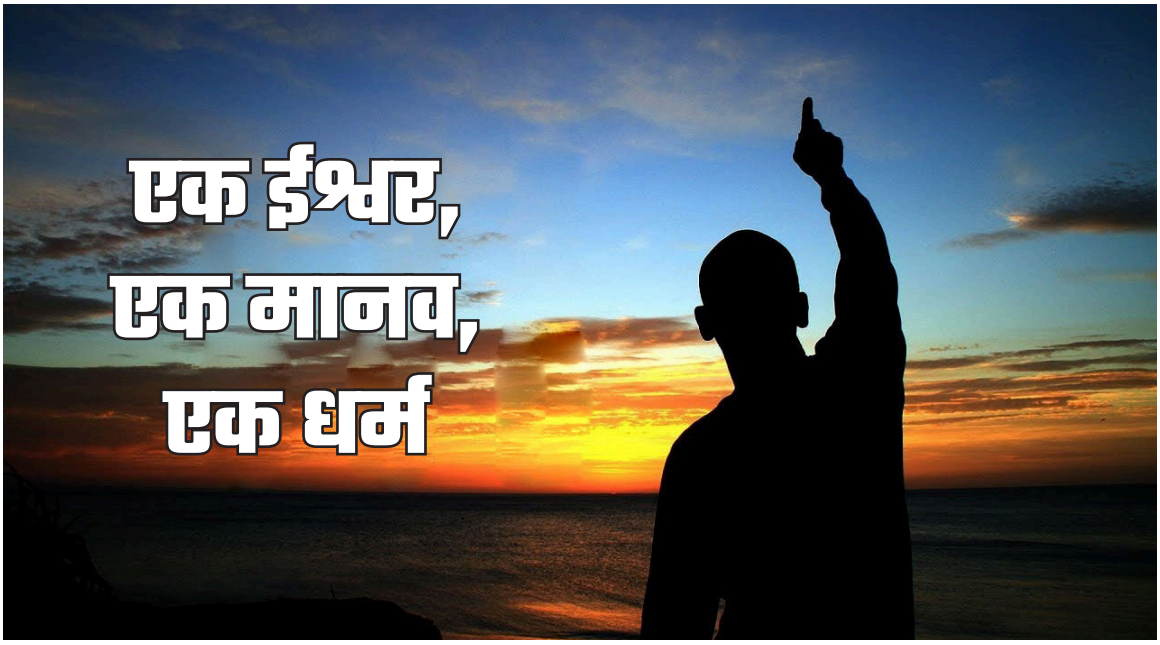

❖एफ़.ए. मुजीब

मानव इतिहास की दीर्घ और जटिल यात्रा में तीन प्रश्न ऐसे हैं जो हर युग, हर सभ्यता और हर भाषा में बार-बार उठते रहे हैं—इस ब्रह्मांड का स्रष्टा कौन है? मानव की उत्पत्ति क्या है? और जीवन जीने का सही मार्ग कौन-सा है? इन्हीं मूल प्रश्नों ने धर्म, नैतिकता और सभ्यता की वैचारिक नींव रखी। आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि दुनिया के विभिन्न धर्म, बाहरी भिन्नताओं के बावजूद, इन प्रश्नों के उत्तरों में एक गहरी वैचारिक समानता रखते हैं। यही समानता "एक ईश्वर, एक मानव, एक धर्म" की अवधारणा को केवल धार्मिक दावा नहीं, बल्कि एक गंभीर शोधपरक सत्य बनाती है।

लगभग सभी प्रमुख धर्म इस बात पर सहमत प्रतीत होते हैं कि यह सृष्टि किसी अंधे संयोग का परिणाम नहीं है। इस्लाम ईश्वर की एकता को आस्था का केंद्र मानता है। यहूदी धर्म में ईश्वर एक, सर्वशक्तिमान और सर्वोच्च शासक है। ईसाई धर्म में यद्यपि त्रित्व (Trinity) का सिद्धांत मिलता है, फिर भी बाइबिल में ईश्वर की एकता एक मूल सत्य के रूप में विद्यमान है। हिंदू धर्म को प्रायः बहुदेववाद के संदर्भ में देखा जाता है, किंतु यदि उसके वैदिक, दार्शनिक और बौद्धिक आधारों का निष्पक्ष अध्ययन किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि हिंदू दर्शन में भी एक सर्वोच्च, एकमात्र और परम सत्य की अवधारणा अत्यंत सुदृढ़ और गहरी है।

> **"इस्लाम ईश्वर की एकता को आस्था का केंद्र मानता है। अन्य प्राचीन सभ्यताओं और धर्मों में भी किसी न किसी रूप में एक सर्वोच्च शक्ति का विचार अवश्य मिलता है। नाम, प्रतीक और अभिव्यक्तियां बदलती रहीं, किंतु मूल धारणा यही रही कि सृष्टि का शासक एक है। ब्रह्मांड की व्यवस्था, उसकी समरसता और प्राकृतिक नियम भी इसी एकत्व की ओर संकेत करते हैं।"**

इसी प्रकार प्राचीन सभ्यताओं और धर्मों में भी किसी न किसी रूप में एक सर्वोच्च शक्ति का विचार अवश्य मिलता है। नाम, प्रतीक और अभिव्यक्तियां बदलती रहीं, किंतु मूल धारणा यही रही कि सृष्टि का शासक एक है। ब्रह्मांड की व्यवस्था, उसकी समरसता और प्राकृतिक नियम भी इसी एकत्व की ओर संकेत करते हैं।

मानव की उत्पत्ति के विषय में धार्मिक और ऐतिहासिक कथाएं भी असाधारण रूप से सामंजस्यपूर्ण दिखाई देती हैं। इबराहीमी धर्म मानव को एक ही मूल—हज़रत आदम—से जोड़ते हैं। पवित्र क़ुरआन मानव को एक पुरुष और एक स्त्री से उत्पन्न बताकर मानव समानता और साझा वंश की वैचारिक आधारशिला रखता है। यहूदी और ईसाई परंपराओं में भी आदम और हव्वा को प्रथम मानव माना जाता है, यद्यपि नैतिक व्याख्याओं में कुछ अंतर दिखाई देता है। ग़ैर-इबराहीमी धर्मों में आदम का नाम नहीं मिलता, किंतु किसी प्रथम मानव या प्रारंभिक मानव-वंश की धारणा अवश्य मौजूद है।

हिंदू धर्म में मनु को प्रथम मानव और विधिदाता माना गया है। हिंदू शास्त्रों में मानव की उत्पत्ति का वर्णन किसी एक ग्रंथ तक सीमित नहीं, बल्कि वैदिक, ब्राह्मणिक और पौराणिक परंपराओं में प्रतीकात्मक, ब्रह्मांडीय और ऐतिहासिक रूप में मिलता है। ज़रथुष्ट्र धर्म गयोमर्त को मानव जाति की आधारशिला मानता है, जबकि बौद्ध धर्म मानव उत्पत्ति के प्रश्न को गौण मानते हुए नैतिक उत्तरदायित्व और कर्म-उत्तरदायित्व को केंद्रीय महत्व देता है।

दिलचस्प तथ्य यह है कि आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान, विशेषकर अनुवांशिकी (जेनेटिक्स), भी मानव जाति की साझा उत्पत्ति (कॉमन एन्सेस्ट्री) की पुष्टि करता है। इस प्रकार धर्म और विज्ञान एक मूल बिंदु पर आकर मिलते हैं—कि रंग, नस्ल, भाषा और भूगोल के भेद के बावजूद मानव एक ही परिवार से संबंधित है। यह सच्चाई नस्लीय और धार्मिक भेदभाव की वैचारिक नींव को कमज़ोर करती है और मानव समानता की धारणा को सुदृढ़ बनाती है।

यहां एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है कि यदि ईश्वर एक है और मानव की उत्पत्ति भी एक है, तो धर्म इतने भिन्न क्यों दिखाई देते हैं? शोधपरक अध्ययन बताता है कि धर्म अपने मूल स्वरूप में एक ही रहा है—अर्थात् ईश्वर की आज्ञाकारिता, नैतिक उत्तरदायित्व, न्याय, सत्य और जवाबदेही की व्यवस्था। भिन्नता विधानों, परंपराओं और ऐतिहासिक परिस्थितियों में आई, न कि धर्म की आत्मा में। क़ुरआन इसी सत्य को इस प्रकार व्यक्त करता है कि ईश्वर के निकट धर्म एक ही है। सभी पैग़म्बरों ने मूल रूप से एक ही संदेश दिया—एकेश्वरवाद, नैतिकता और मानव उत्तरदायित्व।

धार्मिक इतिहास का आलोचनात्मक अध्ययन यह भी स्पष्ट करता है कि वैचारिक विघटन और धार्मिक संघर्षों का बड़ा कारण स्वयं धर्म नहीं, बल्कि मानवीय व्याख्याएं, राजनीतिक स्वार्थ और धार्मिक एकाधिकार रहे हैं। जब धर्म को शक्ति, पहचान या श्रेष्ठता के उपकरण के रूप में प्रयोग किया गया, तब एकता का संदेश विभाजन में बदल गया। यहीं से धर्म पर आपत्तियां जन्म लेती हैं, जबकि वास्तविक समस्या धर्म नहीं, बल्कि उसका मानवीय उपयोग होता है।

ईश्वर की एकता, मानव की साझा उत्पत्ति और धर्म की मूल एकरूपता कोई भावनात्मक नारा नहीं, बल्कि इतिहास, धर्म, विवेक और आधुनिक अनुसंधान—सभी का साझा निष्कर्ष है। यदि मानव इस सत्य को गंभीरता से स्वीकार कर ले, तो धर्म टकराव का नहीं, बल्कि समरसता, नैतिकता और मानव गरिमा का माध्यम बन सकता है। संभवतः वैचारिक विघटन के इस युग में यही वह मार्ग है जिसकी आज की विभाजित दुनिया को सबसे अधिक आवश्यकता है।

इक्कीसवीं सदी की दुनिया, जो वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति के बावजूद गहरे नैतिक संकट से जूझ रही है, एक बार फिर इन्हीं मूल प्रश्नों की ओर लौट रही है। बढ़ते युद्ध, नस्लीय घृणा, धार्मिक कट्टरता और नैतिक रिक्तता इस बात की मांग करते हैं कि मानव ऐसे साझा सिद्धांतों की ओर लौटे जो उसे जोड़ सकें। "एक ईश्वर, एक मानव, एक धर्म" की अवधारणा इसी संदर्भ में अतिमहत्वपूर्ण है। यह न केवल अंतर-धार्मिक संवाद को बढ़ावा देती है, बल्कि नस्ली, भाषाई और सांस्कृतिक विभाजनों की नैतिक आधारशिला को भी कमज़ोर करती है।

निष्कर्षतः, ईश्वर की एकता, मानव की साझा उत्पत्ति और धर्म की मूल एकरूपता कोई भावनात्मक नारा नहीं, बल्कि इतिहास, धर्म, विवेक और आधुनिक अनुसंधान—सभी का साझा निष्कर्ष है। यदि मानव इस सत्य को गंभीरता से स्वीकार कर ले, तो धर्म टकराव का नहीं, बल्कि समरसता, नैतिकता और मानव गरिमा का माध्यम बन सकता है। संभवतः वैचारिक विघटन के इस युग में यही वह मार्ग है जिसकी आज की विभाजित दुनिया को सबसे अधिक आवश्यकता है ■■

ग़ाज़ियाबाद की घटना केवल एक परिवार की त्रासदी नहीं है, बल्कि समाज के सामने खड़ा एक गंभीर संकट है।

समय की मांग है 'डिजिटल पैरेंटिंग'

❖संपादन प्रभाग

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि स्मार्टफ़ोन और इंटरनेट की तकनीक ने जानकारी, मनोरंजन और संवाद के अनगिनत रास्ते खोले हैं, लेकिन इसी तकनीक के भीतर एक ऐसा अंधेरा भी छिपा है, जिसे अक्सर हम नज़रअंदाज़ कर देते हैं। जब तकनीक नियंत्रण का माध्यम बन जाती है और इंसान उसकी गिरफ़्त में आ जाता है तब यह गंभीर ख़तरे का रूप ले लेता है। ग़ाज़ियाबाद में तीन सगी बहनों द्वारा नौवीं मंज़िल से कूदकर



जान देने की घटना इसी गंभीर ख़तरे भयावह संकेत हैं। इसे महज़ आत्महत्या कहना न केवल संवेदनहीनता होगी, बल्कि उस डिजिटल तंत्र को नज़रअंदाज़ करना भी होगा, जिसने इन मासूम ज़िंदगियों को मौत की ओर धकेला।

बारह, चौदह और सोलह वर्ष की उम्र सपनों को आकार देने की होती है। यह वह समय होता है जब बच्चे जीवन को समझना शुरू करते हैं, भविष्य की कल्पनाएं करते हैं और अपने अस्तित्व की दिशा तलाश करते हैं। ऐसी उम्र में मृत्यु को स्वीकार कर लेना स्वाभाविक नहीं हो सकता। यह स्पष्ट संकेत है कि इन बच्चियों के मानसिक संसार पर किसी बाहरी प्रभाव ने गहरा नियंत्रण स्थापित कर लिया था। उपलब्ध सूचनाओं के अनुसार, यह घटना एक 'कोरियन लव गेम' नामक डिजिटल खेल की लत से जुड़ी बताई जा रही है, जो बच्चों के मनोविज्ञान को इस तरह प्रभावित करता है कि वे वास्तविक जीवन से कटने लगते हैं।

इन तीनों बहनों द्वारा छोड़ा गया आठ पन्नों का सुसाइड नोट इस घटना को और भयावह बना देता है। उसमें लिखा गया वाक्य—'मम्मी-पापा सॉरी...गेम नहीं छोड़ पा रही हूं'—सिर्फ़ अपराधबोध नहीं दर्शाता, बल्कि यह डिजिटल लत की उस भयावह सच्चाई को उजागर करता है, जहां व्यक्ति अपनी इच्छा के विरुद्ध भी किसी प्रोग्रामिंग के नियंत्रण में आ जाता है। यह स्थिति मानसिक बीमारी से अलग है। यहां व्यक्ति का विवेक धीरे-धीरे एल्गोरिदम के प्रभाव में दब जाता है। यही कारण है कि इस घटना को कई विशेषज्ञ 'डिजिटल मर्डर' की संज्ञा दे रहे हैं।

डिजिटल गेमिंग उद्योग में 'टास्क-बेस्ड गेम्स' एक ख़तरनाक प्रवृत्ति के रूप में उभर रहे हैं। इन खेलों की संरचना इस प्रकार बनाई जाती है कि खिलाड़ी लगातार नए लक्ष्य पूरे करने के लिए प्रेरित होता रहता है। जानकारों का कहना है कि यह प्रक्रिया मस्तिष्क में डोपामाइन नामक रसायन का स्तर बढ़ाती है, जिससे व्यक्ति को क्षणिक आनंद और उपलब्धि का अनुभव होता है। धीरे-धीरे यह आनंद लत में बदल जाता है और वास्तविक जीवन की गतिविधियां महत्वहीन लगने लगती हैं। जब कोई गेम बच्चों को पढ़ाई, सामाजिक संबंधों और पारिवारिक संवाद से दूर कर देता है, तब वह मनोरंजन नहीं रहता, बल्कि मानसिक दासता का रूप ले लेता है।

ग़ाज़ियाबाद की घटना में यह भी सामने आया कि जब पिता ने अपनी बेटियों को रोकने की कोशिश की, तो बच्चियों ने इसे विरोध या दुश्मनी के रूप में देखा। यह डिजिटल गेमिंग एल्गोरिदम की सबसे ख़तरनाक विशेषता है। ये गेम खिलाड़ी को बाहरी दुनिया से अलग कर देते हैं और उसे यह विश्वास दिलाते हैं कि वही डिजिटल दुनिया उसकी वास्तविक पहचान है। इस प्रकार का मनोवैज्ञानिक नियंत्रण बच्चों के लिए अत्यंत ख़तरनाक साबित हो सकता है।

आज स्मार्टफ़ोन हमारे दैनिक जीवन का अनिवार्य हिस्सा

बन चुका है। शिक्षा, रोज़गार, संवाद और मनोरंजन—हर क्षेत्र में इसकी उपयोगिता निर्विवाद है। लेकिन यह भी सच है कि यही उपकरण 'साइलेंट किलर' का रूप भी धारण कर सकता है। डिजिटल कंपनियां मुनाफ़े की प्रतिस्पर्धा में ऐसे फ़ीचर विकसित कर रही हैं, जो उपयोगकर्ता को अधिक समय तक स्क्रीन से जोड़े रखें। बच्चों के कोमल और विकसित हो रहे मस्तिष्क पर इसका प्रभाव कहीं अधिक गहरा पड़ता है। जब निगरानी और नियमन का अभाव होता है, तब ये तकनीकें बच्चों की भावनाओं, असुरक्षा-बोध और जिज्ञासा का लाभ उठाकर उन्हें लत की ओर धकेल देती हैं।

यह घटना केवल एक परिवार की त्रासदी नहीं है, बल्कि समाज के सामने खड़ा एक गंभीर संकट है। डिजिटल युग में माता-पिता की भूमिका केवल बच्चों को तकनीक उपलब्ध कराने तक सीमित नहीं रह सकती। अब 'डिजिटल पैरेंटिंग' की अवधारणा को समझना और अपनाना आवश्यक हो गया है। बच्चों के व्यवहार में अचानक बदलाव, सामाजिक दूरी, एकांतप्रियता और पढ़ाई से अरुचि जैसे संकेतों को नज़रअंदाज़ करना ख़तरनाक हो सकता है। बच्चों को तकनीक का उपयोग सिखाने के साथ-साथ मानसिक संतुलन, आत्म-नियंत्रण और तनाव से लड़ने की क्षमता भी सिखानी होगी।

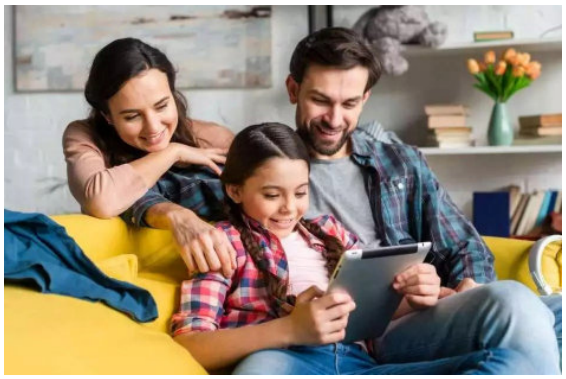

डिजिटल युग में 'डिजिटल पैरेंटिंग' केवल बच्चों के हाथ में मोबाइल देने या उससे दूर रखने का प्रश्न नहीं रह गया है, बल्कि यह उनके मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक संतुलन की रक्षा से जुड़ा दायित्व बन चुका है। माता-पिता को बच्चों की ऑनलाइन गतिविधियों पर निगरानी रखने के साथ-साथ उनके साथ संवाद का ऐसा माहौल बनाना होगा, जहां वे अपनी डिजिटल दुनिया के अनुभव खुलकर साझा कर सकें।

स्क्रीन टाइम की सीमाएं तय करना, उम्र के अनुरूप कंटेंट का चयन करना और बच्चों को यह समझाना आवश्यक है कि आभासी दुनिया वास्तविक जीवन का विकल्प नहीं, बल्कि केवल एक साधन है। तकनीक के उपयोग में संतुलन, जागरूकता और बच्चों को भावनात्मक सहारा प्रदान करना, डिजिटल पैरेंटिंग का महत्वपूर्ण हिस्सा है। हमें जागरूकता, नियंत्रण और संवेदनशीलता को साथ-साथ अपनाना होगा।

इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि सरकार और नियामक संस्थाएं डिजिटल गेमिंग उद्योग पर कठोर नियम लागू करें। ऐसे गेम, जो बच्चों को मानसिक रूप से प्रभावित करते हैं या आत्मघाती प्रवृत्तियों को बढ़ावा देते हैं, उनके ख़िलाफ़ क़ानूनी कार्रवाई की आवश्यकता है। वर्तमान क़ानून डिजिटल अपराधों के कई रूपों को नियंत्रित करने में सक्षम नहीं हैं। इसलिए इस क्षेत्र में नई क़ानूनी धाराओं और नीतियों की आवश्यकता महसूस की जा रही है, जो बच्चों की सुरक्षा को प्राथमिकता दें।

शिक्षा संस्थानों को भी इस संकट को गंभीरता से लेना होगा। स्कूलों में डिजिटल साक्षरता के साथ-साथ साइबर मनोविज्ञान और ऑनलाइन सुरक्षा पर जागरूकता कार्यक्रम चलाए जाने चाहिए। बच्चों को यह समझाना ज़रूरी है कि आभासी दुनिया वास्तविक जीवन का विकल्प नहीं हो सकती। उन्हें यह सिखाना होगा कि तकनीक का उपयोग जीवन को बेहतर बनाने के लिए किया जाए, न कि उसके नियंत्रण में आने के लिए।

ग़ाज़ियाबाद की तीनों बहनों की मृत्यु हमें एक गहरी चेतावनी देती है। यह घटना हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि तकनीकी प्रगति के इस दौर में हमने बच्चों की मानसिक सुरक्षा को कितना महत्व दिया है। अगर समाज, परिवार और सरकार मिलकर इस चुनौती का सामना नहीं करेंगे, तो डिजिटल दुनिया के ये जाल असल दुनिया की मासूम ज़िंदगियों को निगलते रहेंगे।

अंततः यह समझना आवश्यक है कि तकनीक स्वयं न तो पूरी तरह वरदान है और न अभिशाप। उसका स्वरूप इस बात पर निर्भर करता है कि हम उसका उपयोग किस प्रकार करते हैं। हमें बच्चों को तकनीक से दूर नहीं करना, बल्कि उन्हें तकनीक का ज़िम्मेदार उपयोग करना सिखाना होगा। यदि हम समय रहते नहीं चेते, तो मोबाइल स्क्रीन के पीछे छिपा यह ख़तरा आने वाली पीढ़ियों के भविष्य को अंधकारमय बना सकता है। ■■

सूफ़ी परम्परा के "बाबा" फ़रीद और उत्तराखंड से उनका संबंध

(26 जनवरी को कोटद्वार में हुए विवाद ने उत्तराखंड में बढ़ रहे बजरंग दल के अनुचित हस्तक्षेप के साथ जिम ट्रेनर दीपक कुमार के साहस की ख़बर पूरे देश में फैल गयी। यह मामला शुरू इसलिए हुआ था, क्योंकि बजरंग दल को किसी मुसलमान द्वारा अपनी दुकान का नाम 'बाबा' रखना स्वीकार नहीं था। ऐतिहासिक तथ्य बताते हैं कि 'बाबा' शब्द किसी एक समुदाय की पहचान नहीं, बल्कि दक्षिण एशिया की साझा लोक-परम्परा और सूफ़ी परम्परा का प्रतीक रहा है। यह लेख इसी ऐतिहासिक संदर्भ को सामने रखकर समाज को साझा विरासत की वास्तविकता समझाने का प्रयास करता है। लेख यह प्रश्न भी खड़ा करता है कि क्या सदियों से समाज को जोड़ने वाले सांस्कृतिक प्रतीकों को आज संकीर्ण पहचान की राजनीति में बांटा जा रहा है? –संपादक)

❖**इस्लाम हुसैन,** उत्तराखंड

आजकल एक ख़ास विचारधारा के लोग अपनी बात, अपने विश्वास और अपनी भावनाओं को दूसरों पर लादने के लिए ज़बरदस्ती करने पर उतारू हैं। ऐसे एकरंगे तत्व चाहते हैं कि वे जैसा कहते, सोचते और करते हैं, वैसा ही सब मानें, वैसा ही करें, सब उनकी भावनाओं का सम्मान करें और उनसे यह उम्मीद भी न की जाए कि वे किसी की भावनाओं का सम्मान करेंगे। दुख की बात यह है कि पिछले कुछ वर्षों में इस तरह की तानाशाही प्रवृत्ति को लगातार प्रश्रय मिल रहा है।

उत्तराखंड के कोटद्वार में हाल ही में 'बाबा' के नाम पर हुआ बवाल और विवाद भी इसी कड़ी की एक घटना है। जब मुस्लिम दुकानदार की दुकान का नाम "बाबा" देखकर भावनाएं ऐसी आहत हुईं कि पूरे शहर में अशांति फैल गई।

अगर 'बाबा' नाम की खोजबीन की जाए तो पता चलता है कि सूफ़ी संतों को जिस नाम से सबसे ज़्यादा पुकारा जाता है, उसमें "बाबा" शब्द भी शामिल है। यह दक्षिण एशियाई देशों में सबसे लोकप्रिय और अहम संबोधन है।

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि दक्षिण एशियाई देशों में जिन नामों से सबसे अधिक शैक्षणिक संस्थान हैं, उनमें मुस्लिम सूफ़ी "बाबा" फ़रीद का नाम भी शामिल है। ऐतिहासिक रूप से सिद्ध है कि बाबा फ़रीद का उत्तराखंड से सीधा नाता है।

'बाबा' शब्द सूफ़ी परंपरा में अत्यंत लोकप्रिय है। 11वीं सदी से भारतीय समाज में सूफ़ियों, ख़ासकर चिश्तिया सिलसिले के साथ 'बाबा' शब्द गहराई से जुड़ा हुआ है। बाबा फ़रीद से शुरू हुआ यह सिलसिला उत्तराखंड के प्रसिद्ध कालू सय्यद बाबा से लेकर बाबा बुल्ले शाह और बाबा ताजुद्दीन तक चला है और आज भी जारी है। सैकड़ों सूफ़ियों के नाम 'बाबा' से जुड़े हुए हैं।

उत्तराखंड के एक जाने-माने शैक्षिक संस्थान 'बाबा फ़रीद इंस्टीट्यूट ऑफ़ टेक्नोलॉजी' (BFIT), देहरादून में हज़ारों छात्र पढ़कर देश-विदेश में रोज़गार प्राप्त कर रहे हैं। इसकी स्थापना वर्ष 2002 में हुई थी। इस प्रकार यह उत्तराखंड के सबसे पुराने निजी कॉलेजों में से एक है। यह एचएनबी गढ़वाल विश्वविद्यालय से संबद्ध तथा AICTE द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थान है, जिसमें इंजीनियरिंग, मैनेजमेंट,

होटल मैनेजमेंट, कृषि और विज्ञान में डिप्लोमा, स्नातक (UG) और स्नातकोत्तर (PG) पाठ्यक्रम संचालित होते हैं।

यहां से जैव-प्रौद्योगिकी (Biotechnology), खाद्य-प्रौद्योगिकी, कृषि, कंप्यूटर साइंस, आईटी, मास कम्युनिकेशन, होटल मैनेजमेंट और फॉरेस्ट्री जैसे विषयों में पास-आउट विद्यार्थियों का अच्छा प्लेसमेंट होता है। कृषि, फॉरेस्ट्री और तकनीकी शिक्षा (Engineering) में अच्छी रेटिंग होने के कारण यह हर वर्ग के विद्यार्थियों में लोकप्रिय है और उत्तराखंड के श्रेष्ठ कॉलेजों में गिना जाता है।

ऐसा नहीं है कि बाबा फ़रीद के नाम पर यह पहला और अकेला शैक्षणिक संस्थान है। उत्तर भारत में बाबा फ़रीद के नाम पर बीसियों शैक्षिक संस्थान हैं, जैसे–बाबा फ़रीद यूनिवर्सिटी ऑफ़ हेल्थ साइंसेज़ (BFUHS), फ़रीदकोट (पंजाब); बाबा फ़रीद कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी, बठिंडा (पंजाब); बाबा फ़रीद कॉलेज—देहरादून, रूपनगर और मुक्तसर (विभिन्न शाखाएं); बाबा फ़रीद पब्लिक स्कूल (पंजाब के कई ज़िलों में); बाबा फ़रीद सीनियर सेकेंडरी स्कूल, फ़रीदकोट; बाबा फ़रीद डिग्री कॉलेज, मुक्तसर साहब; बाबा फ़रीद मेमोरियल ट्रस्ट (पंजाब क्षेत्र में विभिन्न सामाजिक कार्यों के लिए)। यह सूची अभी पूर्ण नहीं है; इसके अतिरिक्त भी अनेक छोटे-बड़े शैक्षणिक और सामाजिक संस्थान मौजूद हैं।

बाबा फ़रीद का पूरा नाम बाबा फ़रीदुद्दीन मसऊद गंजे-शकर (आध्यात्मिक मिठास का ख़ज़ाना) है। उनका काल 1173 से 1266 ई. तक माना जाता है। वे दक्षिण एशिया के प्रारंभिक और सर्वाधिक प्रभावशाली चिश्ती सूफ़ी संतों में गिने जाते हैं। उनका जन्म मुल्तान क्षेत्र के पास कोठेवाला (वर्तमान पाकिस्तान) में माना जाता है और उनकी आध्यात्मिक गतिविधियों का मुख्य केंद्र अजोधन (आज का पाकपट्टन) रहा, जहां हर वर्ष सिख तीर्थयात्री यात्रा करते हैं।

वे दिल्ली के महान सूफ़ी हज़रत क़ुतुबुद्दीन बख़्तियार काकी के शिष्य थे, जिनके गुरु अजमेर के ख़्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती थे। इस प्रकार बाबा फ़रीद को ख़्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की परंपरा को आगे बढ़ाने वाला तीसरा प्रमुख स्तंभ माना जाता है।

बाबा फ़रीद के दो प्रमुख शिष्य थे—पहले हज़रत अलाउद्दीन मख़दूम साबिर कलियरी, जिनकी दरगाह कलियर, रुड़की में स्थित है। दूसरे हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया थे, जिनकी दरगाह दिल्ली में है।

बाबा फ़रीद के प्रिय भांजे और शिष्य हज़रत अलाउद्दीन साबिर की कलियर स्थित दरगाह हर धर्म और समुदाय के श्रद्धालुओं के लिए अत्यंत पवित्र मानी जाती है। उनके वार्षिक उर्स में देश-विदेश से हज़ारों श्रद्धालु आते हैं, जिनके लिए उत्तराखंड सरकार विशेष व्यवस्थाएं करती है।

पंजाब सरकार भी हज़रत अलाउद्दीन साबिर के उर्स में पंजाब पुलिस के बैंड के साथ सरकारी चादर चढ़ाने की रस्म निभाती है। चादरपोशी से पहले बैंड पूरे रुड़की नगर में भ्रमण करता है। बाबा फ़रीद ने चिश्ती सिलसिले को केवल ख़ानक़ाहों तक सीमित नहीं रखा, बल्कि गांवों-क़स्बों, किसानों, कारीगरों, दस्तकारों और बुनकरों सहित आम जनता तक पहुंचाया। उनकी शिक्षाओं में संयम, समानता, प्रेम, सद्भाव और करुणा प्रमुख थे। भारत में उनकी शिक्षाओं का प्रभाव 12वीं से 16वीं सदी तक व्यापक रूप से दिखाई देता है।

बाबा फ़रीद की शिक्षाएं दार्शनिक ग्रंथों की जटिल भाषा में नहीं, बल्कि लोक-बोली, कहावतों, प्रतीकों और जीवनानुभवों के माध्यम से व्यक्त होती हैं। उन्होंने फ़क़्र

आगामी अंक में पढ़ें ...

प्रिय पाठको,

ऐतिहासिक स्रोतों, प्रामाणिक शोध और विशेषज्ञ दृष्टिकोण के साथ 'कान्ति मासिक' का आगामी अंक इतिहास के उन पहलुओं को सामने लाने का प्रयास करेगा, जिन्हें अक्सर अनदेखा या विकृत किया गया।

इस अंक में पढ़ें–

- भारतीय इतिहास : मिथक, तथ्य और इतिहास लेखन
- मध्यकालीन इतिहास को लेकर फैली धारणाओं की वास्तविकता
- मुसलमानों के आगमन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
- सल्तनत और मुगल काल का सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव
- विशेषज्ञ लेख और संदर्भ सामग्री

–संपादकीय विभाग, कान्ति मासिक

(सांसारिक वस्तुओं से विरक्ति) और जुह्द को विशेष महत्व दिया। उनके अनुसार फ़क्र धन-संपत्ति का त्याग नहीं, बल्कि अहंकार का त्याग है। उनके लिए सच्चा सूफ़ी वही है जो भूखा रह सकता है, पर किसी से कुछ मांगता नहीं और न किसी का दिल दुखाता है।

उन्होंने जीवन की तकलीफ़ों को ईश्वर की परीक्षा नहीं, बल्कि आत्मशुद्धि का साधन माना। उनकी शिक्षाओं में शिकायत के स्थान पर हर परिस्थिति में ईश्वर की रज़ा को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। बाबा फ़रीद के अनुसार ईश्वर-भक्ति का मार्ग इंसान से होकर जाता है। वे कहते हैं—जो इंसान को कष्ट देता है, वह इबादत में चाहे जितना आगे हो, अधूरा है।

उन्होंने फ़ारसी के साथ-साथ पंजाबी/हिंदवी में भी काव्य रचा। यह अपने-आप में एक सांस्कृतिक क्रांति थी, क्योंकि इससे सूफ़ी संदेश पहली बार आम जनता की भाषा में पहुंचा। बाबा फ़रीद दक्षिण एशिया के उन विरले सूफ़ियों में हैं, जिनका कलाम सिखों के पवित्र ग्रंथ गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल है। यह तथ्य उनकी सर्वधर्मीय स्वीकृति और नैतिक ऊंचाई को दर्शाता है।

गुरु ग्रंथ साहब में "श्लोक फ़रीद" के नाम से उनके लगभग 112 श्लोक सम्मिलित हैं। ये श्लोक जीवन, मृत्यु, अहंकार, समय की नश्वरता और आत्मिक शुद्धता पर आधारित हैं।

एक प्रसिद्ध भावार्थ–

"फ़रीदा, मिट्टी से दोस्ती कर, मिट्टी सब कुछ सह लेती है।
जो मिट्टी जैसा हो गया, वही ख़ुदा के क़रीब पहुंचा।"

इन श्लोकों की भाषा सरल, प्रतीकात्मक और गहन आत्म-संवाद से भरपूर है। यही कारण है कि सिख परंपरा में भी बाबा फ़रीद को अत्यंत सम्मान प्राप्त है। बाबा फ़रीद ने दक्षिण एशिया में सूफ़ी-भक्ति संवाद की मज़बूत नींव रखी। सूफ़ियों ने आध्यात्मिक शिक्षाओं को तलवार या सत्ता से नहीं, बल्कि प्रेम, समानता, सौहार्द और करुणा के माध्यम से प्रस्तुत किया और भाषा, लोकगीत तथा कहावतों के माध्यम से अध्यात्म को जन-संस्कृति का हिस्सा बनाया।

उनके प्रभाव के बिना न बाबा बुल्ले शाह को समझा जा सकता है और न गुरु नानक के समय के सांस्कृतिक वातावरण को। बाबा फ़रीद उस महान सूफ़ी परंपरा का हिस्सा हैं जिसने दक्षिण एशिया में इंसानियत और मुहब्बत की मशाल को आगे बढ़ाया। उनकी वाणी इतनी मधुर थी कि उसने विशेषकर पंजाब की मिट्टी को प्रेम से सराबोर कर दिया।

बाबा फ़रीद के लगभग दो सदियों बाद गुरु नानक ने उनकी वाणी को समझा और अपनी उदासियों के दौरान ईश्वर-प्रेम के संदेश में उसका उपयोग किया। बाद में उनकी वाणी गुरु ग्रंथ साहब में सम्मिलित की गई।

वर्ष 1604 में जब गुरु ग्रंथ साहब का पहला प्रकाशन हुआ, तब उसमें बाबा फ़रीद के 112 श्लोक और 4 'शबद' दर्ज किए गए। उनकी रचनाएं इसलिए शामिल की गईं क्योंकि उनकी वाणी मानवता के हित में दया और प्रेम से परिपूर्ण थी।

यह भी उल्लेखनीय है कि सिख तीर्थयात्री पाकिस्तान स्थित ननकाना साहिब और करतारपुर के साथ-साथ पाकपट्टन में बाबा फ़रीद की दरगाह की भी यात्रा करते हैं। इस प्रकार बाबा फ़रीद भारतीय गंगा-जमुनी तहज़ीब के महत्वपूर्ण प्रतिनिधि हैं। इसी कारण 'बाबा' शब्द भारतीय परंपरा का ऐसा सम्मानित संबोधन है, जिसकी विरासत सबकी साझी धरोहर है। इस पर किसी एक वर्ग का एकाधिकार नहीं हो सकता। ■■

(इस्लाम हुसैन 1976 से पत्रकारिता के क्षेत्र में सक्रिय हैं और उत्तराखंड में मुस्लिम समाज के गहन जानकार माने जाते हैं। वे अनेक राष्ट्रीय संस्थाओं से जुड़े हुए हैं तथा गांधीवादी विचारधारा की शीर्ष संस्था अखिल भारतीय सर्व सेवा संघ की राज्य इकाई 'उत्तराखंड सर्वोदय मंडल' के अध्यक्ष हैं।)

कविता

इस दीवाने दिल को देखो क्या शेवा अपनाए है

• हफ़ीज़ मेरठी •

इस दीवाने दिल को देखो क्या शेवा अपनाए है।
उस पर ही विश्वास करे है जिससे धोखा खाए है।।

सारा कलेजा कट-कटकर जब अश्कों में बह जाए है।
तब कोई फ़रहाद बने है तब मजनूं कहलाए है।।

मैं जो तड़प कर रोऊं हूं तो ज़ालिम यूं फ़रमाए है।
इतना गहरा घाव कहां है नाहक़ शोर मचाए है।।

तुमने मुझ को रंज दिया तो इसमें तुम्हारा दोष नहीं।
फूल भी कांटा बन जाए है वक़्त बुरा जब आए है।।

हर गंदगी को दूर करने
के लिए अल्लाह ने कोई न कोई
चीज़ बनाई है, और जिस्म को (रूहानी
गंदगियों और बीमारियों से) पाक
करने वाली चीज़ रोज़ा है, और
रोज़ा आधा सब्र (संयम) है।
(हदीस : इब्ने-माजा)

with best compliment from

Ayaz Ahmad Siddique

Shahjahanpur (UP)

संभावनाओं का देश, संकट में युवा

❖जुनैद अली

अस्सी-नब्बे के दशक में भारत में इसे लेकर व्यापक चिंताएं थीं कि बढ़ती आबादी आपदा के समान है और यदि जनसंख्या वृद्धि को समय रहते नियंत्रित नहीं किया गया तो विकास तथा समृद्धि के सारे रास्ते अवरुद्ध हो जाएंगे। लेकिन क़रीब तीन दशक बाद यह सोच लगभग पूरी तरह से परिवर्तित हो चुकी है। अब जनसंख्या वृद्धि को अभिशाप मानने की धारणा कमज़ोर हुई है, बल्कि यह कहने में कोई हिचक नहीं रह गई है कि बड़ी जनसंख्या अधिक संभावनाओं को साकार करती है।

अप्रैल 2023 में चीन को पछाड़कर भारत सबसे अधिक आबादी वाला देश बना और इस अति-विशिष्ट दर्जे को हासिल करने के बाद देश के भीतर स्थिति शोकाकुल अथवा उदासीन नहीं थी, बल्कि बड़ी आबादी के बलबूते विकास और देश में युवाओं की बड़ी तादाद को बतौर जनांकिकीय लाभांश (डेमोग्राफिक डिविडेंड) के रूप में चिह्नित करते हुए उत्साह का माहौल था। यह कोई अनायास विचार नहीं, बल्कि इसके पीछे महत्वपूर्ण व्यावहारिक कारण यह है कि भारत में दुनिया की सबसे बड़ी युवा आबादी है। इस बड़ी जनसंख्या का अति-विशिष्ट पहलू यह है कि भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 65 प्रतिशत हिस्सा 35 वर्ष से कम आयु का है। यदि 15-64 वर्ष यानी कामकाजी आयु वर्ग की जनसंख्या का अनुपात देखा जाए तो यह लगभग 68 प्रतिशत है और वर्ष 2024 में भारतीय जनसंख्या की औसत आयु 29.80 वर्ष रही, जो जनांकिकीय लाभांश के मामले में भारत को वैश्विक स्तर पर एक विशेष स्थान प्रदान करती है।

वैश्वीकरण और उदारीकरण की नीतियों को अपनाने के साथ भारतीय युवाओं का महत्व धीरे-धीरे पूरी दुनिया में बढ़ने लगा और सहस्त्राब्दी की शुरुआत में सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारतीय युवाओं की दक्षता ने दुनिया को चौंका दिया। वर्ष 2014 में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अमेरिका के न्यूयॉर्क स्थित ऐतिहासिक मैडिसन स्क्वायर गार्डन में भारतीय समुदाय को संबोधित करते हुए कहा था कि भारतीय युवा कंप्यूटर का माउस घुमाकर पूरी दुनिया को प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं।

वैश्वीकरण और उदारीकरण की नीतियों को अपनाने के साथ भारतीय युवाओं का महत्व धीरे-धीरे पूरी दुनिया में बढ़ने लगा और सहस्त्राब्दी की शुरुआत में सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारतीय युवाओं की दक्षता ने दुनिया को चौंका दिया। वर्ष 2014 में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अमेरिका के न्यूयॉर्क स्थित ऐतिहासिक मैडिसन स्क्वायर गार्डन में भारतीय समुदाय को संबोधित करते हुए कहा था कि भारतीय युवा कंप्यूटर का माउस घुमाकर पूरी दुनिया को प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं।

वास्तव में सहस्त्राब्दी के शुरुआती दशक में भारतीय युवाओं की गति पूर्व समय की तुलना में अधिक संतुलित और संभावनाओं को जगाने वाली प्रतीत हो रही थी। ऐसा महसूस हो रहा था कि वैश्विक स्तर पर भारतीय युवाओं की तेज़ प्रगति व्यापक परिवर्तन लाएगी, लेकिन अपेक्षाएं वास्तविकता में तब्दील होने से काफ़ी दूर रह गईं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारतीय युवाओं के सामने प्रगति के विकल्प और संभावनाएं कमज़ोर प्रतीत होती हैं। बीते लगभग एक दशक के आंकड़े बताते हैं कि देश की बहुसंख्यक युवा पीढ़ी विभिन्न स्तरों पर अभूतपूर्व चुनौतियों का सामना कर रही है और समस्याओं से प्रभावित होकर निराशा की ओर बढ़ती दिखाई देती है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि उदारीकरण के बाद भारतीय युवाओं ने तेज़ उड़ान भरी, लेकिन देश की शिक्षा प्रणाली औद्योगिक विकास की बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप समानांतर प्रगति करने में पीछे रह गई। इसका परिणाम यह हुआ कि साक्षरता दर बढ़ने और डिग्रीधारी युवाओं की

संख्या बढ़ने के बावजूद बेरोज़गारी लगातार बढ़ती गई। यह एक चिंताजनक सच्चाई है कि शिक्षित युवाओं के अनुपात में रोज़गार के अवसर अत्यंत सीमित हैं। जब किसी पढ़े-लिखे युवा को यह महसूस होता है कि विद्यार्थी जीवन में देखे गए सपनों को वास्तविकता में बदलने की संभावना कम है, तो वह भीतर ही भीतर टूटकर निराशा और अवसाद के अंधकार में डूबने लगता है।

युवाओं से संबंधित कई सर्वेक्षण बताते हैं कि वर्तमान समय में 18-24 वर्ष आयु वर्ग के 50 प्रतिशत से अधिक युवा तनाव, अवसाद और असफलता के डर जैसी समस्याओं से जूझ रहे हैं और मानसिक स्वास्थ्य संबंधी परामर्श उनकी पहुंच से दूर है। यह अत्यंत असामान्य स्थिति है कि प्रवेश परीक्षाओं और प्रतियोगी परीक्षाओं में युवाओं की विशाल संख्या अत्यंत सीमित सीटों के लिए प्रतिस्पर्धा करती है। इसके अतिरिक्त चयन प्रक्रियाओं में लापरवाही, पेपर लीक के कारण परीक्षाओं का रद्द होना, भ्रष्टाचार और सरकारी हस्तक्षेप युवाओं के भविष्य पर गंभीर प्रहार करते दिखाई देते हैं।

अत्यधिक प्रतिस्पर्धा और अवसरों की कमी युवाओं में मानसिक तनाव बढ़ा रही है। अनेक युवा इस समस्या से बचने के लिए सोशल मीडिया पर अत्यधिक समय बिताने या नशे की ओर झुकने लगे हैं, लेकिन यह प्रवृत्ति समाधान के बजाय समस्याओं को और बढ़ाती है। वर्तमान संदर्भ में युवाओं की सबसे बड़ी समस्या रोज़गार है, जो न केवल आर्थिक बल्कि सामाजिक संरचना को भी प्रभावित कर रही है। बेरोज़गारी दर का लगातार उच्च स्तर पर बने रहना यह दर्शाता है कि आर्थिक नीतियां अपेक्षित परिणाम नहीं दे सकीं।

भारत विविधताओं से परिपूर्ण देश है और युवाओं के बीच भी व्यापक असमानताएं मौजूद हैं। युवाओं को व्यापक रूप से शहरी, ग्रामीण और अल्पसंख्यक समुदायों के युवाओं में वर्गीकृत किया जा सकता है, जिनकी समस्याएं अलग-अलग हैं। शहरी युवाओं के पास शिक्षा और रोज़गार के विकल्प अपेक्षाकृत अधिक होते हैं, लेकिन तीव्र प्रतिस्पर्धा और तेज़ जीवनशैली उन्हें मानसिक दबाव में डाल देती है। महंगी शहरी जीवनशैली में पर्याप्त आय के अभाव में जीवन अत्यंत कठिन हो जाता है। भीड़भाड़ के बीच अकेलेपन की भावना बढ़ती जा रही है, जिसके कारण कुछ युवा अपराध या नशे की ओर मुड़ जाते हैं।

ग्रामीण और क़स्बाई क्षेत्रों के युवाओं की स्थिति भी चिंताजनक है। अधोसंरचना विकास के दावों के बावजूद गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और कौशल प्रशिक्षण का अभाव उनकी प्रतिभा को सीमित करता है। यदि कोई युवा शिक्षा प्राप्त भी कर ले, तो औद्योगिक मानकों के अनुरूप कौशल की कमी के कारण उसे कम स्तर की नौकरी स्वीकार करनी पड़ती है। रोज़गार के अभाव में ग्रामीण युवा शहरों की ओर पलायन करते हैं, जहां उन्हें शोषण और असुरक्षा का सामना करना पड़ता है।

भारत धर्मनिरपेक्ष देश होने के बावजूद जाति और धार्मिक पहचान कई बार सामाजिक असमानता को जन्म देती है। अनुसूचित जाति और जनजाति के युवाओं को क़ानूनी संरक्षण प्राप्त है और उनके आंदोलनों ने कई बार शासन-प्रशासन को हस्तक्षेप के लिए मजबूर किया है। वहीं मुस्लिम युवाओं से जुड़े मामलों में राजनीतिक और प्रशासनिक रवैया कई बार असंतुलित दिखाई देता है। बीते वर्षों में ऐसे अनेक मामले सामने आए हैं जिनमें मुस्लिम युवकों के ख़िलाफ़ झूठे आरोप लगाए गए और वर्षों बाद वे निर्दोष साबित हुए, लेकिन क्षतिपूर्ति की कोई प्रभावी व्यवस्था उपलब्ध नहीं है।

हेट स्पीच और मॉब लिंचिंग की घटनाएं मुस्लिम युवाओं को मुख्यधारा से दूर करने की प्रवृत्ति को दर्शाती हैं। कई मामलों में न्यायिक प्रक्रियाएं धीमी होने के कारण पीड़ितों को न्याय नहीं मिल पाता। इससे मुस्लिम युवाओं में भय और असुरक्षा की भावना बढ़ती है।

यह स्थिति लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए चिंताजनक है कि देश के सबसे बड़े अल्पसंख्यक समुदाय के लिए अवसर सीमित होते दिखाई देते हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोज़गार और सामाजिक अवसरों की कमी मुस्लिम युवाओं के सामने गंभीर चुनौती बनकर उभर रही है। सच्चर समिति ने वर्षों पहले मुस्लिम युवाओं को मुख्यधारा में लाने के लिए विशेष शिक्षा और कौशल कार्यक्रमों की आवश्यकता बताई थी, लेकिन उसकी सिफ़ारिशों पर अपेक्षित अमल नहीं हुआ।

वर्तमान समय में युवाओं की मानसिक स्थिति को लेकर भी चिंता बढ़ रही है। एनसीआरबी के आंकड़े युवाओं में आत्महत्या की बढ़ती प्रवृत्ति की ओर संकेत करते हैं। इसके बावजूद मुस्लिम समाज में पारिवारिक और आध्यात्मिक मूल्यों के कारण युवाओं में धैर्य और संघर्ष की भावना अपेक्षाकृत अधिक देखी जाती है, जो उन्हें जीवन की चुनौतियों का सामना करने की शक्ति प्रदान करती है। ■■

कन्नड़ में क़ुरआनी विमर्श : महिलाएं बनी बदलाव की अगुवा

❖मुहम्मद तल्हा सिद्दी बापा

बीदर के ऐतिहासिक रंग मंदिर में इन दिनों एक ख़ामोश, लेकिन गहरे असर वाली पहल आकार ले रही है। यह वही मंच है, जहां आम तौर पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों की गूंज सुनाई देती रही है। मगर हाल ही में यहां जो दृश्य देखने को मिला, उसने कर्नाटक के सामाजिक परिदृश्य में एक अहम बदलाव का संकेत दिया—एक मुस्लिम महिला मंच के केंद्र में खड़ी होकर क़ुरआन पर व्याख्यान दे रही थी। ख़ास बात यह थी कि यह प्रवचन उर्दू में नहीं, बल्कि सुस्पष्ट, साहित्यिक कन्नड़ भाषा में था।

जमाअत-ए-इस्लामी हिन्द (JIH) कर्नाटक की महिला शाखा द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम का शीर्षक था–"क़ुरआन के आलोक में शांति और समृद्धि"। इसमें अलग-अलग समुदायों से आई सैकड़ों महिलाएं शामिल हुईं। यह आयोजन महज़ एक धार्मिक व्याख्यान नहीं था, बल्कि सामाजिक दूरी को पाटने और आपसी समझ बढ़ाने की एक सार्थक कोशिश भी था।

भाषा बनी संवाद-सेतु

इस कार्यक्रम के केंद्र में थीं सबीहा फ़ातिमा। उन्होंने सूरह बनी-इसराईल (आयतें 23 से 30) की व्याख्या करते हुए उस भाषाई दीवार को तोड़ा, जो अक्सर इस्लामी विमर्श को स्थानीय समाज से अलग कर देती है। उनके प्रवचन में ईश्वर-भक्ति, माता-पिता के सम्मान और व्यक्तिगत ईमानदारी जैसे सार्वभौमिक नैतिक मूल्यों पर ज़ोर दिया गया।

कन्नड़ भाषा का चयन केवल संयोग नहीं था। कर्नाटक जैसे राज्य में, जहां भाषा सांस्कृतिक पहचान का अहम आधार है, यह पहल समावेशन का एक सशक्त संकेत बनकर सामने आई। लिंगायत समुदाय से आई एक श्रोता ने कहा–"पहली बार मैंने क़ुरआन की इतनी सहज और अपनी भाषा में व्याख्या सुनी है। इससे संदेश परायापन नहीं, बल्कि साझा अनुभूति बन जाता है।"

एकता की आवाज़

कार्यक्रम की अहमियत तब और बढ़ गई, जब विभिन्न आस्थाओं से जुड़ी महिला नेताओं ने भी मंच साझा किया। यह दृश्य अपने-आपमें सामाजिक एकजुटता का प्रतीक था। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की प्रतिमा बहनजी ने आध्यात्मिक साधना और सामाजिक आचरण के बीच संबंध को रेखांकित किया। उन्होंने कहा–"शांति कोई अमूर्त विचार नहीं है। जब ईश्वर से प्रेम और मानवता के प्रति करुणा हमारे दैनिक व्यवहार का हिस्सा बन जाते हैं, तब शांति अपने-आप जन्म लेती है।"

बसव मंतप से जुड़ी माता सत्यदेवी ने भी इसी भावना को आगे बढ़ाया। उन्होंने कहा–"मुस्लिम महिलाओं को इस आत्म-विश्वास के साथ आगे आते देखना आशा जगाता है। यह पहल हर समुदाय की महिलाओं को आपसी सद्भाव के लिए आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है।"

नीति से व्यवहार तक

JIH कर्नाटक महिला शाखा की सचिव तशकीला ख़ानम ने इस पहल को केवल धार्मिक गतिविधि नहीं, बल्कि नागरिक ज़िम्मेदारी के रूप में देखा। अपने संबोधन में उन्होंने कहा–"शांति की शुरुआत इंसान के अपने दिल से होती है। जब तक भीतर शांति नहीं होगी, तब तक समाज में उसका विस्तार संभव नहीं है। नफ़रत को तोड़ना और सद्भाव को बढ़ाना हमारे सामाजिक ढांचे के लिए अनिवार्य है।"

उन्होंने युवाओं में सकारात्मक सोच विकसित करने पर ज़ोर दिया और क़ुरआन के संदेश को "सत्य, न्याय और मानवता" से जोड़ते हुए स्पष्ट किया कि यह किसी भी तरह के धार्मिक विभाजन को बढ़ावा नहीं देता।

■■

सर्च सुविधा के साथ लांच हुआ 'तफ़हीमुल क़ुरआन' ऐप



क़ुरआन पूरी मानवजाति के लिए मार्गदर्शक ग्रंथ है और इसकी शिक्षाएं सार्वभौमिक हैं। इसी उद्देश्य से मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी की क़ुरआन व्याख्या पर आधारित "तफ़हीमुल क़ुरआन (हिंदी)" ऐप को विकसित किया गया, जिसमें क़ुरआन का मूल पाठ, हिंदी अनुवाद और व्याख्या उपलब्ध है। इस हिंदी ऐप को नई दिल्ली स्थित 'इस्लामी साहित्य ट्रस्ट' द्वारा विकसित किया गया है, ताकि क़ुरआन की शिक्षाएं हिंदी भाषी समाज सहित व्यापक जनसमूह तक पहुंच सकें।

अब इस ऐप को और अधिक उपयोगी और शोधपरक बनाने की दिशा में नया क़दम उठाया गया है। हाल ही में इसके नए संस्करण में सब्जेक्ट इंडेक्स (Subject Index) को शामिल किया गया है, जिसके माध्यम से उपयोगकर्ता तफ़हीमुल क़ुरआन में मौजूद विभिन्न विषयों को आसानी से खोजकर उनसे संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। यह सुविधा विशेष रूप से विद्यार्थियों, शोधकर्ताओं और सामान्य पाठकों के लिए अध्ययन को सरल और व्यवस्थित बनाती है। जिन लोगों ने अभी तक इस ऐप को डाउनलोड नहीं किया है, वे प्ले स्टोर या ऐप स्टोर पर जाकर Tafheemul Quran Hindi सर्च करके इसे डाउनलोड कर सकते हैं, जबकि जो लोग पहले से इसका उपयोग कर रहे हैं, वे नए फ़ीचर्स का लाभ उठाने के लिए इसे अपडेट कर सकते हैं।

इस नए फ़ीचर का उद्घाटन बीते दिनों जमाअत इस्लामी हिंद के अमीर जनाब सय्यद सआदतुल्लाह हुसैनी के हाथों संपन्न हुआ। नई दिल्ली स्थित जमाअत के मुख्यालय में आयोजित इस उद्घाटन समारोह में जमाअत इस्लामी हिंद के महासचिव जनाब टी. आरिफ़ अली, इस्लामी साहित्य ट्रस्ट के अध्यक्ष जनाब डॉ. फ़रहत हुसैन, सचिव वारिस हुसैन तथा एकेडमिक डायरेक्टर मौलाना नसीम ग़ाज़ी फ़लाही सहित कई प्रमुख हस्तियां उपस्थित रहीं। कार्यक्रम में वक्ताओं ने इस पहल को क़ुरआन अध्ययन को अधिक सुव्यवस्थित और शोधपरक बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण क़दम बताया।



■■

लघुकथा

सिर्फ़ देर काफ़ी है!

❖सुफ़ियान अहमद

उस पर अभी कोई फ़ैसला नहीं हुआ है। कटघरे में खड़ा आदमी हर तारीख़ पर थोड़ा छोटा हो जाता है। यह उसका मानसिक, सामाजिक और अस्तित्वगत क्षरण है। हर कुछ महीनों में उसे अदालत लाया जाता। जज कहते—मामला गंभीर है। वकील कहते—मुवक्किल सहयोग कर रहा है। सरकारी वकील कहते—जांच जारी है। तारीख़ बढ़ जाती, आदमी घट जाता।

क़ानून कहता है—जब तक दोष सिद्ध न हो, व्यक्ति निर्दोष है। व्यवहार कहता है—जब तक रिहाई न मिले, यातना जारी है। बरसों बीत गए, आदमी अन्दर है। बाहर बहस है—अभिव्यक्ति, असहमति, राज्य की शक्ति।

जेल में एक दिन उसने अपने वकील से पूछा—"मेरा अपराध क्या है?" वकील ने फाइल खोली, पन्ने पलटे, बोला—"अभी तय नहीं है, मामला विचाराधीन है। Unlawful Activities Prevention Amendment Act, 2019 लगाया है।"

व्यवस्था की इससे बड़ी विडम्बना और क्या होगी कि वर्षों पहले आह भरने वाला व्यक्ति अभी भी क़ैद में है, जबकि क़त्ल का चर्चा कहीं नहीं है। उसका मामला अब भी अदालत में लंबित है। 'उमर' बढ़ रही है, जीवन घट रहा है और दम घुट रहा है। सज़ा मिल रही है, पर अपराध प्रमाणित नहीं है। बहस का सिलसिला जारी है—अभिव्यक्ति, असहमति, राज्य की शक्ति...

अभियोजन पक्ष को यह सब कुछ ख़ूब रास आ रहा है, क्योंकि उनके लिए दोष सिद्धि अहम नहीं, सिर्फ़ देर काफ़ी है। ■■

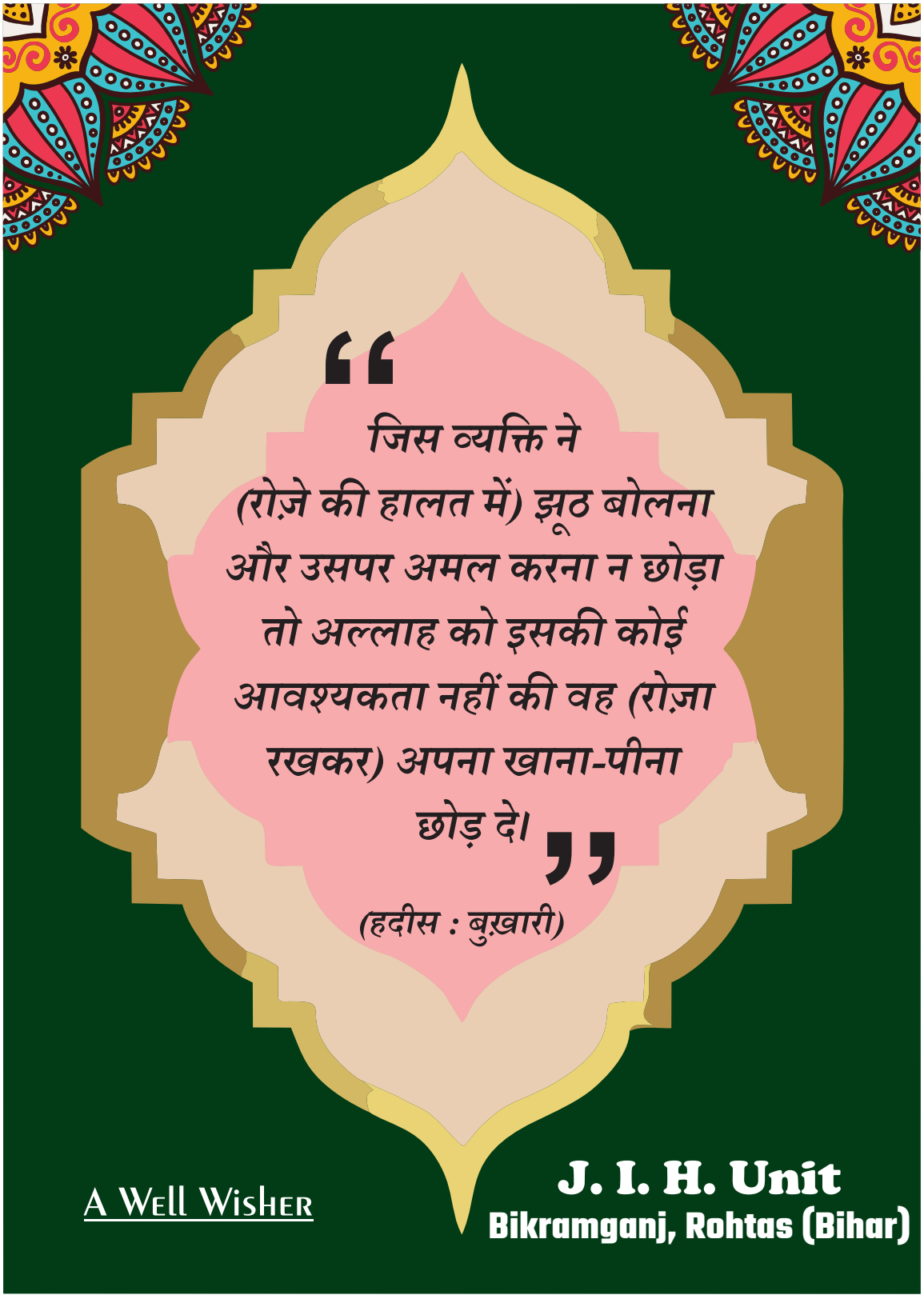
“
जिस व्यक्ति ने
(रोज़े की हालत में) झूठ बोलना
और उसपर अमल करना न छोड़ा
तो अल्लाह को इसकी कोई
आवश्यकता नहीं की वह (रोज़ा
रखकर) अपना खाना-पीना
छोड़ दे।
”
(हदीस : बुख़ारी)
A Well Wisher
J. I. H. Unit
Bikramganj, Rohtas (Bihar)

ऑन लाइन डिलिवरी कर्मियों की पीड़ा

सुविधा की दौड़ में सुरक्षा का संकट

❖संपादन प्रभाग

बीते कुछ वर्षों में भारत की शहरी ज़िंदगी की रफ़्तार जिस तरह बदली है, उसने सुविधा को आवश्यकता और आवश्यकता को आदत में बदल दिया है। आज भोजन, दवा, किराना, इलेक्ट्रॉनिक सामान—सब कुछ उंगलियों के इशारे पर उपलब्ध है। मोबाइल ऐप पर एक क्लिक और कुछ ही मिनटों में दरवाज़े पर सामान। यह सुविधा आधुनिक उपभोक्ता समाज की सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जा रही है। मगर इसी चमकदार सुविधा के पीछे एक ऐसा वर्ग खड़ा है, जिसकी मेहनत, जोखिम और असुरक्षा अक्सर हमारी निगाहों से ओझल रहती है — गिग वर्कर्स, यानी ऑनलाइन डिलिवरी से जुड़े कर्मी।



कोविड महामारी के बाद इस क्षेत्र में अभूतपूर्व विस्तार हुआ। मांग पर सामान पहुंचाने वाली कंपनियों ने "दस मिनट में डिलिवरी" जैसे दावे कर प्रतिस्पर्धा को चरम पर पहुंचा दिया। लेकिन जैसे-जैसे समय की यह होड़ तेज़ होती गई, वैसे-वैसे सड़क हादसों, मानसिक दबाव और श्रम शोषण की ख़बरें भी सामने आने लगीं। सवाल यह नहीं है कि सुविधा बुरी है, सवाल यह है कि क्या किसी की जान की क़ीमत पर सुविधा को वैध ठहराया जा सकता है? केंद्र सरकार द्वारा दस मिनट में डिलिवरी के दावों पर रोक इसी प्रश्न का उत्तर तलाशने की कोशिश है।

गिग : अवसर और अंतर्विरोध

ऑनलाइन डिलिवरी व्यवस्था को अक्सर रोज़गार सृजन की मिसाल के रूप में पेश किया जाता है। नीति आयोग की वर्ष 2022 की रिपोर्ट बताती है कि वर्ष 2020 में देश में गिग वर्कर्स की संख्या लगभग 77 लाख थी, जो 2030 तक 2.35 करोड़ तक पहुंच सकती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस क्षेत्र ने लाखों युवाओं को आय का साधन दिया है—ख़ासकर तब, जब सार्वजनिक क्षेत्र में नौकरियां सीमित होती जा रही हैं।

लेकिन इस चमकदार तस्वीर का दूसरा पहलू भी है। गिग वर्कर न तो पूरी तरह कर्मचारी हैं और न ही स्वतंत्र उद्यमी। वे एक ऐसे धुंधले क्षेत्र में खड़े हैं, जहां उनसे पूर्ण समर्पण की अपेक्षा की जाती है, लेकिन अधिकार सीमित रहते हैं। कंपनियां यह दावा करती हैं कि कर्मियों को काम के घंटे चुनने की आज़ादी है, पर वास्तविकता यह है कि एल्गोरिद्म-आधारित लक्ष्य, रेटिंग सिस्टम और समयबद्ध डिलिवरी का दबाव इस "आज़ादी" को लगभग निरर्थक बना देता है।

दस मिनट की डिलिवरी : सुविधा या जोखिम?

दस मिनट में सामान पहुंचाने का दावा सुनने में जितना आकर्षक लगता है, ज़मीनी हक़ीक़त उतनी ही भयावह है। शहरी यातायात, संकरी गलियां, ट्रैफिक नियम और

मौसम—इन सबके बीच इतनी कम समय-सीमा में डिलिवरी का मतलब साफ़ है— तेज़ रफ़्तार, जोखिम और लापरवाही। यही कारण है कि देश के विभिन्न हिस्सों से डिलिवरी कर्मियों की सड़क दुर्घटनाओं में मौत की ख़बरें सामने आती रही हैं।

यह कोई व्यक्तिगत लापरवाही का मामला नहीं, बल्कि व्यावसायिक व्यवस्थागत दबाव का नतीजा है। जब किसी कर्मी की आय, रेटिंग और भविष्य इस बात पर निर्भर हो कि वह तय समय में डिलिवरी करता है या नहीं, तो वह स्वाभाविक रूप से अपनी सुरक्षा से समझौता करता है। इस संदर्भ में सरकार द्वारा दस मिनट की शर्त पर रोक लगाना एक सराहनीय क़दम है।

असंतोष की अभिव्यक्ति

31 दिसंबर 2025 को देश भर के डिलिवरी कर्मियों द्वारा की गई हड़ताल ने इस असंतोष को सार्वजनिक रूप दिया। यह हड़ताल केवल वेतन या बोनस की मांग नहीं थी, बल्कि सम्मान, सुरक्षा और मानवीय कार्य-स्थितियों की पुकार थी। गिग वर्कर्स ने यह स्पष्ट किया कि वे मशीन नहीं हैं, जिन्हें समय की दौड़ में झोंक दिया जाए।

श्रम मंत्री मनसुख मांडविया द्वारा तत्परता से कंपनियों के प्रतिनिधियों से बातचीत कर समाधान निकालना इस बात का संकेत है कि सरकार अब इस क्षेत्र की संवेदनशीलता को समझ रही है। यह पहल इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि गिग वर्कर्स की संख्या आने वाले वर्षों में और बढ़ने वाली है, जिसमें महिलाओं की भागीदारी भी उल्लेखनीय होगी।

उपभोक्तावाद बनाम नैतिक ज़िम्मेदारी

आधुनिक बाज़ार व्यवस्था में प्रतिस्पर्धा का सबसे बड़ा लाभार्थी उपभोक्ता होता है। बेहतर सेवाएं, कम क़ीमतें और तेज़ डिलिवरी—सब कुछ उपभोक्ता के हित में बताया जाता है। लेकिन भारत जैसे विकासशील देश में यह अक्सर भुला दिया जाता है कि सुविधा प्रदान करने वाला श्रमिक भी इसी समाज का हिस्सा है।

बीते वर्षों में ऐसी कई घटनाएं सामने आई हैं, जहां धर्म, जाति या पहचान के आधार पर डिलिवरी कर्मियों के साथ दुर्व्यवहार किया गया। यह केवल सामाजिक संवेदनहीनता नहीं, बल्कि उस असमान शक्ति-संबंध का परिणाम है, जिसमें उपभोक्ता स्वयं को सर्वोपरि और कर्मी को अदृश्य मानने लगता है। दस मिनट की डिलिवरी जैसी शर्तें इस असमानता को और गहरा करती हैं।

सामाजिक सुरक्षा की दिशा में पहल

साल 2025-26 के बजट में गिग वर्कर्स को सामाजिक सुरक्षा के दायरे में लाने की घोषणा एक महत्वपूर्ण क़दम था। पहचान-पत्र, पंजीकरण, स्वास्थ्य बीमा और ऋण योजनाओं से जोड़ने की पहल यह स्वीकार करती है कि गिग वर्कर्स भी औपचारिक अर्थव्यवस्था का हिस्सा हैं, भले ही उनकी कार्य-प्रकृति असंगठित हो।

दस मिनट की शर्त को निरस्त करना इस दिशा में अगला तार्किक क़दम है। इससे न केवल सड़क दुर्घटनाओं का जोखिम कम होगा, बल्कि कर्मियों पर मानसिक दबाव भी घटेगा। हालांकि, यह ज़रूरी है कि कंपनियां इस रोक को केवल शब्दों तक सीमित न रखें, बल्कि अपने संचालन मॉडल में वास्तविक बदलाव करें।

नियामक तंत्र की अनिवार्यता

सरकार के आदेश के बाद कई ऑनलाइन मंचों ने अपने ऐप से दस मिनट में डिलिवरी का दावा हटा दिया है। लेकिन आशंका यह है कि यह होड़ किसी नए नाम या नए तरीक़े से फिर सामने न आ जाए। इसलिए केवल आदेश पर्याप्त नहीं है; एक सतत निगरानी तंत्र की आवश्यकता है।

सरकार को ऑनलाइन कंपनियों के साथ मिलकर ऐसे मानक तय करने होंगे, जिनमें समय-सीमा, कार्य-घंटे, स्वास्थ्य सुरक्षा, दुर्घटना क्षतिपूर्ति और शिकायत निवारण की स्पष्ट व्यवस्था हो। यह तंत्र इतना सख़्त न हो कि सेवाएं बाधित हो जाएं और इतना ढीला भी न हो कि कर्मियों की जान जोखिम में पड़ जाए।

वास्तविक प्रगति

विकास का पैमाना केवल तेज़ सेवाएं और बढ़ता मुनाफ़ा नहीं हो सकता; उसका असली मूल्यांकन इस बात से होना चाहिए कि वह अपने सबसे कमज़ोर हिस्से को कितना सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन देता है।

गिग अर्थव्यवस्था भारत के भविष्य का अहम हिस्सा है। यह लाखों लोगों के लिए आजीविका का साधन है और उपभोक्ताओं के लिए सुविधा का। लेकिन यह तभी टिकाऊ हो सकती है, जब इसमें संवेदनशीलता, सुरक्षा और सामाजिक न्याय को केंद्रीय स्थान दिया जाए। सरकार, कंपनियों और उपभोक्ताओं—तीनों की साझा ज़िम्मेदारी है कि सुविधा और शोषण के बीच की रेखा स्पष्ट बनी रहे। ■■

भारतीय युवा और नागरिक चेतना

❖नुवेरा अली

किसी राष्ट्र की प्रगति तब दिखाई देती है, जब उसके नागरिक आर्थिक स्थिरता के साथ-साथ नैतिक मूल्यों को भी महत्व देते हैं। भारत में यह ज़िम्मेदारी विशेष रूप से युवाओं पर आती है, क्योंकि वही देश का भविष्य हैं और समाज की असली ताक़त भी। इसलिए देश के समग्र विकास के लिए युवाओं में मज़बूत नागरिक चेतना का होना बेहद ज़रूरी है।

आज युवा शिक्षा, रोज़गार और डिजिटल दुनिया समेत समाज के लगभग हर क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। ऐसे में नागरिक चेतना केवल सरकार या व्यवस्था की ज़िम्मेदारी नहीं रह जाती, बल्कि यह हर व्यक्ति के व्यवहार और उसके सामाजिक दायित्व से जुड़ जाती है।

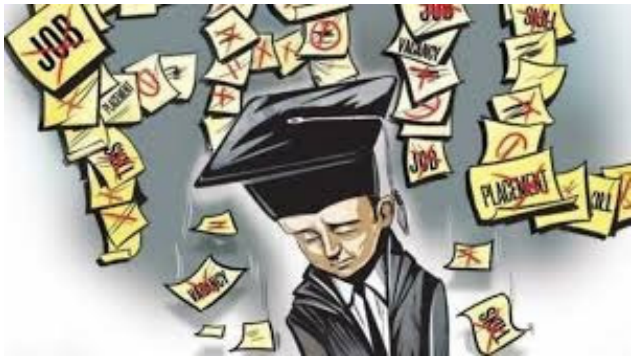

नागरिक चेतना का अर्थ सिर्फ़ क़ानून मान लेना नहीं है। यह उन मूल्यों, आदतों और ज़िम्मेदारियों से बनती है, जिन्हें हम रोज़मर्रा के जीवन में अपनाते हैं। यदि समाज में नागरिक ज़िम्मेदारी कमज़ोर हो, तो किसी भी तरह की तरक़्क़ी टिकाऊ नहीं रह सकती। क़ुरआन और सुन्नत समाज की कमज़ोरियों और ताक़तों दोनों की पहचान करते हैं और उन्हें सुधारने का रास्ता दिखाते हैं।

नागरिक चेतना का असली मतलब

नागरिक चेतना का सीधा-सा मतलब है—एक ज़िम्मेदार और संवेदनशील नागरिक होना। यह चेतना डर या सज़ा के भय से नहीं आती, बल्कि सार्वजनिक स्थानों के सम्मान, समय और संसाधनों की क़द्र और दूसरों के प्रति लिहाज़ से पैदा होती है। इसका अर्थ यह है कि कोई देख रहा हो या नहीं, व्यक्ति सार्वजनिक जगहों को अपनी ज़िम्मेदारी समझे। यही सोच एक स्वस्थ और बेहतर समाज की बुनियाद रखती है।

आज नागरिक चेतना को अक्सर एक विकल्प की तरह देखा जाता है, जबकि यह हमारे जीवन का ज़रूरी हिस्सा होनी चाहिए—चाहे हम घर में हों या बाहर। इस्लामी शिक्षाएं हर इंसान की गरिमा को महत्व देती हैं, चाहे उसका धर्म या पृष्ठभूमि कुछ भी हो। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) की शिक्षाएं इस बात को साफ़ तौर पर सामने रखती हैं–

• "मुसलमान वह है, जिसकी ज़बान और हाथ से दूसरे सुरक्षित रहें।" (हदीस : बुख़ारी)

• "सफ़ाई आधा ईमान है।" (हदीस : मुस्लिम)

इन शिक्षाओं का दायरा केवल निजी आस्था तक सीमित नहीं है। ये समाज में शालीन व्यवहार, सार्वजनिक स्वच्छता और दूसरों के प्रति संवेदनशीलता की अहमियत को रेखांकित करती हैं। कचरे का सही निपटान और साफ़-सफ़ाई पूरे समुदाय के स्वास्थ्य से जुड़ा विषय है।

सशक्त युवा, लेकिन ज़िम्मेदारी से दूरी

आज का युवा पहले की किसी भी पीढ़ी से ज़्यादा शिक्षित, डिजिटल रूप से सक्रिय और दुनिया से जुड़ा हुआ है।

इसके बावजूद यह ज्ञान और जागरूकता व्यवहार में पूरी तरह नज़र नहीं आती। सड़क पर लापरवाह ड्राइविंग, खुलेआम कचरा फेंकना, ऑनलाइन गाली-गलौज और सार्वजनिक संस्थाओं के प्रति असम्मान—ये सब ज्ञान और आचरण के बीच की दूरी को दिखाते हैं।

आज का युवा दूसरों की आलोचना करने में तेज़ है, लेकिन अपने व्यवहार पर नज़र डालने से अक्सर बचता है। सार्वजनिक स्थानों को केवल सरकार की ज़िम्मेदारी मान लिया जाता है, जबकि सच यह है कि समाज में हमारी

पहचान हमारे अपने कामों से बनती है।

क़ुरआन यह बताता है कि हर व्यक्ति अपने कर्मों के लिए ईश्वर के सामने जवाबदेह है। इसका अर्थ यह है कि समाज में सुधार किसी दबाव से नहीं, बल्कि आत्म-मंथन और आत्मानुशासन से शुरू होता है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) ने मदीना के चार्टर के ज़रिए नागरिक ज़िम्मेदारी का व्यावहारिक उदाहरण पेश किया। इसमें मुसलमानों और ग़ैर-मुसलमानों—दोनों के अधिकार सुरक्षित किए गए। धर्म की स्वतंत्रता, क़ानून के सामने समानता, जीवन और संपत्ति की सुरक्षा, पारस्परिक रक्षा और सामूहिक दंड का निषेध—ये सब इसके मूल सिद्धांत थे। यही कारण है कि मदीना का चार्टर इतिहास के शुरुआती लिखित संविधानों में गिना जाता है।

सार्वजनिक स्थल समाज का आईना होते हैं

सड़कें, पार्क, सार्वजनिक परिवहन, अस्पताल और स्कूल—ये सभी साझा संपत्ति हैं। इनका नुक़सान सबसे ज़्यादा ग़रीब और वंचित लोगों को उठाना पड़ता है, ख़ासकर उन्हें जो इन्हीं जगहों पर जीवन बिताते हैं। यह स्थिति समाज में ज़िम्मेदारी और संवेदनशीलता की कमी को साफ़ दिखाती है।

क़ुरआन में 'अमानत' की धारणा यह सिखाती है कि इंसान पर रखी गई ज़िम्मेदारियां एक भरोसे की तरह होती हैं। सार्वजनिक संसाधन भी एक साझा अमानत हैं, जिनकी हिफ़ाज़त करना हम सबका फ़र्ज़ है। उनका दुरुपयोग इस नैतिक सिद्धांत के ख़िलाफ़ जाता है।

नागरिक आचरण के सबक़

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) का जीवन नागरिक व्यवहार की बेहतरीन मिसाल है। सफ़ाई, दया, सार्वजनिक हित, सामाजिक कल्याण और दूसरों के प्रति हमदर्दी—ये सभी बातें उनके आचरण में साफ़ दिखाई देती हैं। रास्ते से हानिकारक चीज़ हटाने को उन्होंने सदक़ा बताया, जो आज की नागरिक ज़िम्मेदारी से सीधे जुड़ा हुआ विचार है।

पड़ोसियों का सम्मान करना, किसी को नुक़सान न पहुंचाना, साफ़-सफ़ाई बनाए रखना और सार्वजनिक व्यवहार में सब्र रखना—ये सब उनकी शिक्षाओं के अहम हिस्से हैं। भले ही ये बातें धार्मिक परंपरा से जुड़ी हों, लेकिन इनकी अहमियत हर समय और हर समाज में बनी रहती है।

बहुलतावादी समाज में नागरिक चेतना

भारत अपनी सांस्कृतिक और धार्मिक विविधता के लिए जाना जाता है। यही विविधता समाज से ज़्यादा समझदारी और परिपक्वता की मांग करती है। लोकतंत्र में मतभेद होना स्वाभाविक है, लेकिन उन्हें व्यक्त करने का तरीक़ा ही समाज की दिशा तय करता है।

पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) एक ऐसे समाज में रहे, जहां अलग-अलग क़बीलों और आस्थाओं के लोग रहते थे। इसके बावजूद वे नुबूवत से पहले ही ग़ैर-मुसलमानों के बीच 'अल-अमीन' और 'अस-सादिक़' के नाम से जाने जाते थे। यह आपसी भरोसे और सम्मान की मिसाल है। संयमित भाषा, सहिष्णुता और किसी को हानि न पहुंचाने की सोच—ये नागरिक चेतना के ऐसे तत्व हैं जो समाज को जोड़े रखते हैं।

आलोचना से आगे बढ़कर योगदान की ज़रूरत

बिना अपना व्यवहार बदले सिर्फ़ सार्वजनिक संस्थाओं को दोष देना समाज को कमज़ोर बनाता है। भारतीय युवाओं को आलोचक बनने से पहले योगदानकर्ता बनना होगा। यह बदलाव बाहर से नहीं, भीतर से शुरू होता है। गांधी जी का कथन—"वह परिवर्तन बनिए, जो आप दुनिया में देखना चाहते हैं"—यही बात समझाता है।

इस्लामी शिक्षाएं सदियों पहले ही यह सिखा चुकी हैं कि शांति, साफ़-सफ़ाई, क़ानूनों का पालन और दूसरों के साथ गरिमापूर्ण व्यवहार समाज की स्थिरता की बुनियाद हैं। सामूहिक भलाई के लिए किया गया छोटा-सा प्रयास भी समाज को बेहतर दिशा दे सकता है।

निर्माण से पहले चरित्र

भारतीय समाज की असली ताक़त उसके मूल्यों में छिपी है। देश का भविष्य केवल तकनीक या अर्थव्यवस्था से तय नहीं होता, बल्कि उसके नागरिकों के चरित्र से तय होता है। युवा भारत की सबसे बड़ी शक्ति हैं, लेकिन अगर नागरिक चेतना को नज़रअंदाज़ किया गया, तो यही शक्ति कमज़ोरी में बदल सकती है।

सड़कें, स्कूलों और कॉलेजों की कक्षाएं और डिजिटल मंच केवल शासन की तस्वीर नहीं दिखाते, बल्कि उन्हें इस्तेमाल करने वाले नागरिकों के आचरण को भी उजागर करते हैं। जवाबदेही, अमानत और दूसरों के प्रति संवेदनशीलता—ये ऐसे नैतिक मूल्य हैं जो नागरिक चेतना को मज़बूत बनाते हैं। यदि युवा सुविधा के बजाय ज़िम्मेदारी को चुनें, तो भारत की प्रगति केवल आंकड़ों में नहीं बल्कि गरिमा, व्यवस्था और आपसी सम्मान से भरे सामाजिक जीवन में दिखाई देगी। ■■

एआई, विज्ञान और मानव बुद्धि की सीमा

❖संपादन प्रभाग

मानव इतिहास में गणित केवल संख्याओं का खेल नहीं रहा, बल्कि वह सोच की सबसे कठिन, सबसे शुद्ध और सबसे चुनौतीपूर्ण अभिव्यक्ति रहा है। सदियों से गणितज्ञ उन समस्याओं से जूझते रहे हैं, जिनका हल न केवल तकनीकी कौशल, बल्कि कल्पना, धैर्य और बौद्धिक साहस की मांग करता है। बीसवीं सदी के महान गणितज्ञ पॉल एर्डोस द्वारा प्रस्तुत जटिल गणितीय समस्याएं और अनुमान इसी बौद्धिक परंपरा का हिस्सा हैं। दशकों तक ये समस्याएं दुनिया भर के दिग्गज विद्वानों के लिए चुनौती बनी रहीं। ऐसे में जब यह दावा सामने आया कि एक आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस प्रणाली ने इन समस्याओं में से कुछ का समाधान कर लिया है, तो यह ख़बर केवल तकनीकी उपलब्धि नहीं, बल्कि मानवीय बुद्धि की परिभाषा को चुनौती देने वाली घटना बन गई।

हाल ही में हार्मोनिक नामक एआई स्टार्टअप ने यह दावा किया कि उसकी प्रणाली 'अरिस्टॉटल' (Aristotle) ने ओपन एआई की उन्नत तकनीक 'जीपीटी-5.2 प्रो' के साथ मिलकर एर्डोस समस्याओं का समाधान खोज लिया है। इस दावे ने वैज्ञानिक और दार्शनिक, दोनों ही स्तरों पर एक नई बहस को जन्म दिया है कि क्या एआई अब सचमुच सोच सकता है, या वह केवल पहले से मौजूद ज्ञान की नक़ल कर रहा है?

एर्डोस गणितीय दावे और उनकी महत्ता

एर्डोस समस्याएं साधारण गणितीय पहेलियां नहीं हैं। ये ऐसे अनुमान और प्रश्न होते हैं, जो गणितीय सोच की सीमाओं को परखते हैं। इनका उद्देश्य किसी अवधारणा को सही या ग़लत सिद्ध करना होता है, और अक्सर इनके समाधान के लिए वर्षों—कभी-कभी दशकों—की मेहनत लगती है। यही कारण है कि इन समस्याओं का हल निकालना किसी भी शोधकर्ता के लिए बड़ी उपलब्धि मानी जाती है।

जब ओपनएआई से जुड़े एक वरिष्ठ शोधकर्ता 'केविन वेइल' ने दावा किया कि जीपीटी-5 ने ऐसी दस जटिल एर्डोस सवालों को हल कर लिया है, तो यह ख़बर वैश्विक अकादमिक जगत में तेज़ी से फैली। कुछ गणितज्ञों ने इसे ऐतिहासिक क्षण बताया, तो कुछ ने इसे सावधानी से देखने की सलाह दी।

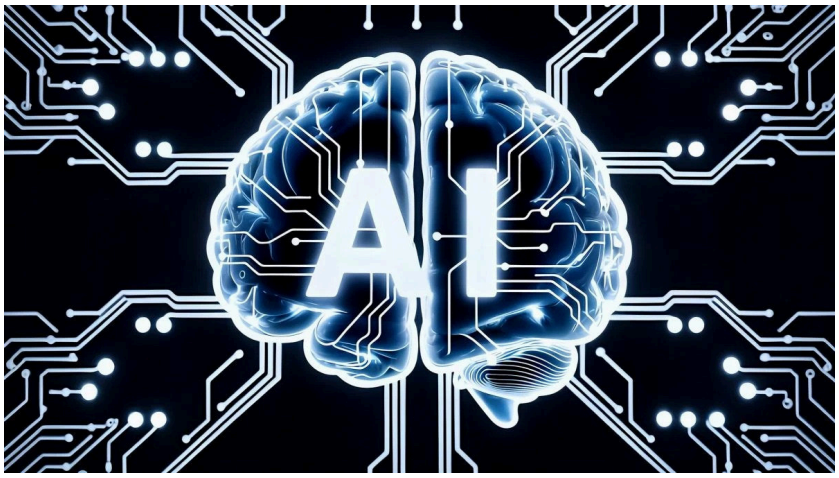

एआई की नई क्षमताएं : मात्र एक शोध उपकरण

बीते डेढ़-दो वर्षों में एआई प्रणालियों में बड़ा बदलाव आया है। ओपनएआई और गूगल जैसी कंपनियों ने 'रिइन्फोर्समेंट लर्निंग' तकनीक के ज़रिए अपने सिस्टम को इस तरह प्रशिक्षित किया कि वे 'प्रयास और त्रुटि' की प्रक्रिया से सीख सकें। इसका परिणाम यह हुआ कि एआई अब केवल उत्तर देने तक सीमित नहीं रहा, बल्कि समस्याओं के तार्किक समाधान खोजने लगा।

ब्रिटेन के गणितज्ञ केविन बैरेटो और लियाम प्राइस द्वारा जीपीटी-5 का उपयोग कर एक लंबे समय से अनसुलझी समस्या का समाधान इसका उदाहरण है। इसके बाद हार्मोनिक

के एआई सिस्टम 'अरिस्टॉटल' ने उस समाधान की पुष्टि की। 'अरिस्टॉटल' की ख़ासियत यह है कि वह विशिष्ट प्रोग्रामिंग भाषा के ज़रिए यह प्रमाणित करता है कि दिया गया समाधान गणितीय रूप से सही है या नहीं। यह सत्यापन प्रक्रिया एआई को एक शक्तिशाली सहायक उपकरण के रूप में स्थापित करती है।

क्या यह वास्तविक समझ है?

यहीं से बहस का दूसरा और अधिक जटिल पक्ष शुरू होता है। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर टेरेंस ताओ, जो स्वयं एक महान गणितज्ञ हैं, एआई की इन क्षमताओं को लेकर सतर्क दृष्टिकोण रखते हैं। उनके अनुसार, एआई एक ऐसे चतुर छात्र जैसा है, जिसने परीक्षा के लिए सब कुछ रट लिया है, लेकिन अवधारणाओं की गहरी समझ विकसित नहीं की है। उसके पास इतनी व्यापक पृष्ठभूमि की जानकारी होती है कि वह समझ का भ्रम पैदा कर सकता है।

मैनचेस्टर विश्वविद्यालय के गणितज्ञ थॉमस ब्लूम भी इस प्रगति से प्रभावित तो हैं, लेकिन वे यह सवाल उठाते हैं कि अभी तक ऐसा कोई ठोस प्रमाण नहीं मिला है कि एआई मानव कल्पना से परे मौलिक विचार उत्पन्न कर सकता है। उनके अनुसार, एआई ने जो समाधान प्रस्तुत किए हैं, वे अक्सर पहले से ज्ञात पद्धतियों पर आधारित हैं—बस उन्हें अधिक तेज़ी और व्यापकता से खोज लिया गया है।

हाल ही में हार्मोनिक नामक एआई स्टार्टअप ने यह दावा किया कि उसकी प्रणाली 'अरिस्टॉटल' (Aristotle) ने ओपन एआई की उन्नत तकनीक 'जीपीटी-5.2 प्रो' के साथ मिलकर एर्डोस समस्याओं का समाधान खोज लिया है। इस दावे ने वैज्ञानिक और दार्शनिक, दोनों ही स्तरों पर एक नई बहस को जन्म दिया है कि क्या एआई अब सचमुच सोच सकता है, या वह केवल पहले से मौजूद ज्ञान की नक़ल कर रहा है?

मौलिकता बनाम पुनरावृत्ति

यह सवाल केवल तकनीकी नहीं, बल्कि दार्शनिक भी है। क्या मौलिकता का अर्थ बिल्कुल नया विचार गढ़ना है, या पहले से मौजूद ज्ञान के बीच ऐसे संबंध खोज लेना भी मौलिकता कहलाएगा, जो मानव को तुरंत न दिखाई दे? जैक्सन लेबोरेटरी के प्रोफ़ेसर डॉ. डेरिया उनुतमाज का मानना है कि आधुनिक एआई प्रणालियां अब ऐसी परिकल्पनाएं सुझा सकती हैं, जिन पर मानव शोधकर्ताओं ने पहले कभी विचार नहीं किया। यह क्षमता एआई को एक सक्रिय सहयोगी बनाती है, न कि केवल निष्क्रिय उपकरण।

फिर भी, अधिकांश वैज्ञानिक इस बात पर सहमत हैं कि एआई अभी भी दिशा-निर्देशों पर निर्भर है। उसे यह बताना पड़ता है कि क्या खोजना है, किस दिशा में सोचना है और प्राप्त सूचनाओं में से क्या उपयोगी है। इस प्रक्रिया में मानवीय विवेक की भूमिका निर्णायक बनी रहती है।

मानव-एआई सहयोग का भविष्य

आज एआई तेज़ी से विकसित होता शोध उपकरण बन चुका है। वह विशाल डेटा का विश्लेषण कर सकता है, दुर्लभ शोध पत्र खोज सकता है और जटिल गणनाओं को मिनटों में पूरा कर सकता है। लेकिन खोज की प्रक्रिया केवल गणना नहीं है। वह जिज्ञासा, संदेह और असहज सवालों से जन्म लेती है—उन चीज़ों से, जो तयशुदा पैटर्न में फिट नहीं बैठतीं।

यही वह क्षेत्र है, जहां मानव बुद्धि अब भी अपरिहार्य है। एक अनुभवी शोधकर्ता न केवल एआई को सही प्रश्न पूछने में मदद करता है, बल्कि उसके द्वारा प्रस्तुत उत्तरों को संदर्भ, इतिहास और अर्थ की कसौटी पर भी परखता है।

एर्डोस समस्याओं के समाधान को लेकर उठी यह बहस हमें एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष तक ले जाती है। एआई निस्संदेह विज्ञान और गणित के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी उपकरण बन चुका है। वह मानवीय क्षमता का विस्तार करता है, उसकी गति और पहुंच को कई गुना बढ़ा देता है। लेकिन वह अभी भी उस मानवीय प्रवृत्ति का स्थान नहीं ले पाया है, जो असामान्य को पहचानती है, संदेह करती है और जोखिम उठाकर नए रास्ते तलाशती है।

खोज अब भी एक मानवीय प्रयास है—ऐसा प्रयास, जिसमें तकनीक सहायक हो सकती है, लेकिन निर्णयकर्ता नहीं। शायद भविष्य का सबसे बड़ा वैज्ञानिक क़दम मानव और एआई के बीच प्रतिस्पर्धा में नहीं, बल्कि उनके सहयोग में छिपा है। जहां मशीनें गणना करेंगी और मनुष्य अर्थ खोजेगा। यही संतुलन विज्ञान को आगे ले जाएगा। ■■

लैंगिक आधार पर हिंसा : हक़ीक़त को समझने की ज़रूरत

❖डॉ. रफ़ीआ नौशीन

लैंगिक आधार पर हिंसा (Gender-Based Violence) आज की दुनिया में मानवाधिकारों के सबसे गंभीर और व्यापक पैमाने पर पाए जाने वाले उल्लंघनों में से एक है। यह मसला उम्र, वर्ग, धर्म, राष्ट्रीयता और संस्कृति की तमाम सीमाओं से परे है। अक्सर यह घरों की चहारदीवारी के अंदर छुपा रहता है, परंपरा के नाम पर सामान्य बना दिया जाता है या "निजी मामला" कहकर नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप करोड़ों लोग, विशेष रूप से औरतें और लड़कियां अपनी गरिमा, सुरक्षा और बुनियादी मानवाधिकारों से वंचित हो जाती हैं। लैंगिक आधार पर हिंसा को समझना, इसके विभिन्न रूपों को पहचानना और इससे संबंधित फैली हुई ग़लतफ़हमियों को चुनौती देना, रोकथाम, न्याय और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में पहला क़दम है।

लैंगिक आधार पर हिंसा क्या है?

लैंगिक आधार पर हिंसा से अभिप्राय वे तमाम हानिकारक कृत्य हैं, जो किसी व्यक्ति के साथ उसके लिंग या लैंगिक पहचान (Gender identity) के आधार पर किए जाएं। यद्यपि हर लिंग के व्यक्ति इसका शिकार हो सकते हैं, लेकिन औरतें और लड़कियां ज़्यादातर इससे प्रभावित होती हैं, जिसका मूल कारण ऐतिहासिक लैंगिक असमानता, पितृसत्तात्मक (Patriarchy) व्यवस्था और शक्ति के अन्यायपूर्ण संबंध हैं। यह हिंसा सिर्फ़ शारीरिक नहीं होती, इसमें मानसिक पीड़ा, यौन उत्पीड़न, आर्थिक नियंत्रण और आधुनिक युग में डिजिटल उत्पीड़न भी शामिल है। इसके प्रभाव व्यक्ति तक सीमित नहीं रहते, बल्कि परिवार, परिवेश और पूरे समाज पर पड़ते हैं।

विभिन्न संस्थाओं की ओर से लैंगिक आधार पर हिंसा की अलग-अलग ढंग से व्याख्याएं की गई हैं। संयुक्त राष्ट्र के वर्ष 1993 के घोषणापत्र "महिला विरोधी हिंसा के उन्मूलन" के अनुसार, 'लैंगिक आधार पर हिंसा से तात्पर्य हिंसा का कोई भी ऐसा व्यवहार है, जो महिलाओं के लिए शारीरिक, यौन या मानसिक नुक़सान या कष्ट का कारण बने या बनने की आशंका रखता हो, जिसमें ऐसे कृत्यों की धमकियां, दबाव या स्वतंत्रता से मनमाने ढंग से वंचित करना शामिल है, चाहे यह सार्वजनिक जीवन में हो या निजी जीवन में।'

यह परिभाषा स्पष्ट करती है कि हिंसा सिर्फ़ सार्वजनिक स्थानों तक सीमित नहीं, बल्कि घरों के अंदर भी हो सकती है और धमकी या दबाव भी हिंसा के ही रूप हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार, लैंगिक आधार पर हिंसा वे तमाम हानिकारक कृत्य हैं जो व्यक्तियों या समूहों के ख़िलाफ़ उनके लिंग के आधार पर किए जाएं और जिनकी जड़ें लैंगिक असमानता, शक्ति के ग़लत इस्तेमाल और हानिकारक सामाजिक व्यवहारों में हों। WHO इस बात पर ज़ोर देता है कि लैंगिक हिंसा के शारीरिक, मानसिक, प्रजनन, स्वास्थ्य और पूरे जीवन पर दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं।

राष्ट्रीय क़ानून (सामान्य परिप्रेक्ष्य)

अधिकतर देशों में लैंगिक आधार पर हिंसा से संबंधित क़ानून निम्नलिखित क्षेत्रों के तहत आते हैं–

- घरेलू हिंसा
- यौन शोषण और दुष्कर्म
- कार्यस्थल पर उत्पीड़न
- मानव तस्करी
- साइबर अपराध और ऑनलाइन बदसलूकी

यद्यपि कई देशों में लैंगिक हिंसा को दंडनीय अपराध और संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन स्वीकार किया गया है, मगर सामाजिक बदनामी, रिपोर्टिंग का अभाव और संस्थागत पक्षपात के कारण कार्यान्वयन अक्सर कमज़ोर रहता है।

लैंगिक आधार पर हिंसा के प्रकार

लैंगिक आधार पर हिंसा कई रूपों में सामने आती है। इन प्रकारों को समझना इन अत्याचारों को पहचानने में मदद देता है, जो अक्सर नज़रअंदाज़ हो जाते हैं।

(1) शारीरिक हिंसा : यह सबसे स्पष्ट और प्रकट रूप है, जिसमें शामिल हैं–

- मार-पीट, थप्पड़, घूंसे और लातें

• जलाना या गला घोंटना

• हथियार या वस्तुओं का इस्तेमाल

• ज़बरदस्ती क़ैद रखना। शारीरिक ज़ख्म नज़र आ जाते हैं, मगर इसके मानसिक प्रभाव कहीं ज़्यादा लंबे समय तक बने रहते हैं।

(2) यौन हिंसा : यौन हिंसा शारीरिक स्वायत्तता और सहमति का प्रत्यक्ष उल्लंघन है, जिसमें शामिल हैं–

• बलात्कार और वैवाहिक बलात्कार

• यौन हमला और छेड़छाड़

• ज़बरदस्ती यौन संबंध

• यौन शोषण और तस्करी

• यौन उत्पीड़न और नापसंद यौन गतिविधियां—यह हिंसा घरों, दफ़्तरों, शैक्षणिक संस्थानों, युद्ध क्षेत्रों और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स पर भी हो सकती है।

(3) भावनात्मक और मानसिक हिंसा : अक्सर कम गंभीर समझा जाने वाला यह उत्पीड़न अत्यंत विनाशकारी साबित हो सकता है, जैसे–

• अपमानजनक शब्द, उपहास और निरंतर आलोचना

• नुक़सान पहुंचाने या छोड़ (Abandonment) देने की धमकियां

• मानसिक प्रताड़ना (Gaslighting) और जोड़-तोड़

• परिवार और दोस्तों से अलग-थलग करना—यह हिंसा आत्मविश्वास को तबाह कर देती है और डिप्रेशन, बेचैनी और आत्महत्या के विचारों को जन्म दे सकती है।

(4) आर्थिक हिंसा : आर्थिक हिंसा किसी व्यक्ति की वित्तीय स्वायत्तता का हनन करती है, जिसमें शामिल हैं–

• पैसे या संसाधनों तक पहुंच रोकना

• शिक्षा या नौकरी से मना करना

• कमाई ज़बरदस्ती छीन लेना

• आर्थिक शोषण और वंचना (Deprivation)—यह हिंसा प्रभावित व्यक्ति को हिंसा से भरे रिश्ते में क़ैद रखने का माध्यम बन जाती है।

(5) डिजिटल हिंसा : टेक्नोलॉजी के बढ़ते इस्तेमाल के साथ लैंगिक हिंसा डिजिटल दुनिया तक फैल चुकी है, जिसमें शामिल हैं–

• साइबर स्टॉकिंग और ऑनलाइन उत्पीड़न

• तस्वीरों या वीडियो को बिना अनुमति फैलाना

• ब्लैकमेलिंग और धमकियां

• सोशल मीडिया पर नफ़रत फैलाने वाली और लैंगिक अपमानजनक भाषा तथा निरंतर डिजिटल हिंसा, सार्वजनिक और स्थायी होती है, जो पीड़ा को कई गुना बढ़ा देती है।

लैंगिक आधार पर हिंसा : ग़लतफ़हमियां और हक़ीक़त

ग़लतफ़हमी (1) : यह मसला सिर्फ़ ग़रीब या कम शिक्षित लोगों में होता है। हक़ीक़त : लैंगिक हिंसा हर वर्ग, हर पेशे और हर शैक्षणिक स्तर पर पाई जाती है।

ग़लतफ़हमी (2) : अगर हिंसा वास्तव में गंभीर होती तो प्रभावित व्यक्ति उसे छोड़ देता। हक़ीक़त : हिंसा से निकलना आसान नहीं होता। भय, वित्तीय निर्भरता, सामाजिक दबाव, बच्चे और संस्थागत नाकामी इसमें बड़ी रुकावट बनते हैं।

ग़लतफ़हमी (3) : पुरुष लैंगिक हिंसा का शिकार नहीं हो सकते। हक़ीक़त : महिलाएं ज़्यादा प्रभावित होती हैं, मगर पुरुष और अन्य लैंगिक पहचान रखने वाले व्यक्ति भी इस हिंसा का शिकार हो सकते हैं।

ग़लतफ़हमी (4) : यह घरेलू मामला है, बाहर वालों को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। हक़ीक़त: लैंगिक हिंसा एक गंभीर मानवाधिकारों का मसला और सामाजिक ज़िम्मेदारी है।

ग़लतफ़हमी (5) : झूठे आरोप आम होते हैं। हक़ीक़त: जांच से साबित है कि झूठी शिकायतें बहुत कम होती हैं, जबकि असल मसला कम रिपोर्टिंग का है।

लैंगिक आधार पर हिंसा का अंत क्यों ज़रूरी है?

लैंगिक हिंसा समानता, प्रगति और शांति की राह में बड़ी रुकावट है। यह–

• बुनियादी मानवाधिकारों का उल्लंघन है।

• शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को तबाह करता है।

• बच्चों और आने वाली नस्लों को प्रभावित करता है।

• सामाजिक एवं आर्थिक प्रगति को कमज़ोर करता है।

लैंगिक हिंसा का अंत सिर्फ़ महिलाओं का मसला नहीं, बल्कि पूरे समाज की सामूहिक ज़िम्मेदारी है। लैंगिक हिंसा ख़ामोशी, इन्कार और ग़लत जानकारी में पनपती है। इसकी परिभाषाओं को समझ कर, इसके विभिन्न रूपों को पहचान कर और ग़लतफ़हमियों को रद्द करके ही हम रोकथाम और न्याय की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं। जागरूकता एक शुरुआत है, मगर बदलाव के लिए क़दम उठाना बहुत ज़रूरी है। ■■

प्रेरणादायक स्क्रीन कर्फ़्यू



शाम ढलते ही जैसे ही गांव की गलियों में ढोल की आवाज़ गूंजती है और मेगाफ़ोन से ऐलान होता है, लोग समझ जाते हैं कि अब पढ़ाई का वक़्त शुरू हो गया है। टीवी बंद, मोबाइल साइलेंट और पूरे गांव में दो घंटे के लिए पढ़ाई का सन्नाटा छा जाता है। नॉर्थ कर्नाटक के कई गांवों में बच्चों की पढ़ाई को पटरी पर लाने के लिए ऐसा ही अनोखा स्क्रीन कर्फ़्यू लागू किया गया है।

दरअस्ल, टीवी और स्मार्टफ़ोन बच्चों का ध्यान किताबों से ज़्यादा खींच रहे थे। इसका असर सीधे बोर्ड परीक्षाओं पर दिखा। क्लास 10 यानी SSLC परीक्षा में कई ज़िलों का प्रदर्शन कमज़ोर रहा, जिसके बाद राज्य शिक्षा विभाग ने सख़्त, लेकिन व्यावहारिक क़दम उठाया। योजना के तहत रोज़ शाम 7 बजे से 9 बजे तक गांवों में मोबाइल फ़ोन और टीवी बंद रखने की पहल की गई है, ताकि बच्चे बिना किसी डिस्टर्बेंस के पढ़ाई पर फोकस कर सकें।

हर शाम ग्राम पंचायत का कर्मचारी गांव की गलियों में घूमता है। वह डुगडुगी बजाकर या मेगाफ़ोन से अनाउंसमेंट कर लोगों को स्क्रीन बंद करने की याद दिलाता है और बच्चों को पढ़ाई का माहौल देने की अपील करता है।

इस पहल की शुरुआत बेलगावी ज़िले के हलगा गांव से हुई थी। वहां मिले अच्छे नतीजों के बाद इसे हावेरी, गदग और बागलकोट के कई इलाक़ों में लागू किया गया। अभियान का साफ़ मक़सद है, स्कूल के बाद बच्चों को रोज़ कम-से-कम दो घंटे की बिना किसी रोक-टोक या परेशानी के पढ़ाई मिले। इसे सफल बनाने के लिए ज़िला पंचायत से लेकर ग्राम पंचायत और PDO तक सभी मिलकर काम कर रहे हैं। लोग बच्चों के भविष्य के लिए इसमें पूरा सहयोग दे रहे हैं।

वस्तुतः यह पहल शिक्षा के क्षेत्र में सामुदायिक सहभागिता का एक प्रेरणादायक उदाहरण प्रस्तुत करती है। आज के डिजिटल युग में जहां स्क्रीन बच्चों के समय और ध्यान पर हावी होती जा रही है, वहां इस तरह का सामूहिक अनुशासन न केवल पढ़ाई के प्रति गंभीरता बढ़ाता है, बल्कि समाज में शिक्षा के महत्व को भी रेखांकित करता है। हालांकि यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि यह व्यवस्था बच्चों पर दबाव या प्रतिबंध के रूप में न उभरे, बल्कि प्रेरणा और संतुलित डिजिटल उपयोग की समझ विकसित करने का माध्यम बने। यदि इस पहल के साथ अभिभावकों और शिक्षकों द्वारा मार्गदर्शन और सकारात्मक अध्ययन वातावरण भी जोड़ा जाए, तो यह मॉडल अन्य राज्यों के लिए भी एक प्रभावी और अनुकरणीय उदाहरण बन सकता है। ■■

क़ौम के अह्ले-सर्वत और अह्ले-ख़ैर हज़रात से ख़ुसूसी अपील

यतीमख़ाना इस्लामिया गया

आपके माली तआवुन का मुंतज़िर है



108 साल की ख़िदमात

तआरुफ़ इदारा की बुनियाद अक्तूबर 1917 में एक उस्ताद और दो यतीम बच्चों से आठ आने (50 पैसे) माहवार किराया की कोठरी में Rs. 30 रुपये की छोटी-सी रक़म से पड़ी थी **तालीमी साल :** अप्रैल ता मार्च **तालीमी मराहिल :** इब्तिदाई, • सानवी, • आला, • शोबा-ए-हिफ़्ज़ व नाज़रा, • इनायत (I.T.I.) • पांच जवानों में तालीम • अरबी • उर्दू • फ़ारसी • हिन्दी • अंग्रेज़ी • तादाद ज़ेरे-तालीम तलबा व तालिबात : तक़रीबन 450 **• तादाद कुल यतीम तलबा** 60 • बेरूनी तलबा, जो अपना ख़र्च देकर हॉस्टल में रहते हैं, उसके अलावा हैं। • तादाद तदरीसी व ग़ैर-तदरीसी स्टाफ़ : 28 **सालाना ख़र्च :** चालीस लाख (RS. 40,00,000) रुपये से ज़्यादा। **ज़रिया आमदनी :** मुस्लिम अवाम के चंदे। **ख़र्चे :** यतीम तलबा का सारा ख़र्च (तआम, क़ियाम, रिहाइश वग़ैरा बिल्कुल मुफ़्त [Free]) ये सारा ख़र्च इदारा पूरा करता है। किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। **याद रखें :** (1) यहां का कोई भी मुहस्सिल कमीशन या उजरत पर चंदा वसूल नहीं किया करता है। (2) पांच ज़बानों में क़ुरआन व इस्लामियात के साथ क्लास 1 से मैट्रिक (Matric) तक (जो बिहार बोर्ड से मंज़ूरशुदा है) मेयारी तालीम दी जाती है। • हिफ़्ज़ के साथ-साथ मैट्रिक का नज़्म (3) 108 साल से इदारा यतीम और ग़ैर-यतीम तलबा की इस्लामी माहौल में दीनी व असरी तालीम के साथ तालीमी व तरबियती ख़िदमात अंजाम दे रहा है। (4) इदारा ही के अहाते (Campus) में दो हरे-भरे पार्क के साथ शानदार मस्जिद, तालीमगाह, इक़ामतगाह, मतबख़ और दूसरे शोबे वग़ैरा हैं • इसलिए तलबा को कहीं आना-जाना नहीं पड़ता है। **कफ़ाला स्कीम (Sponsorship)** के तहत एक यतीम तालिब-इल्म का सालाना ख़र्च तीस हज़ार रुपये RS. 30,000 है। आप भी इस कारे-सवाब में शरीक हों। • यहां के तलबा को मैट्रिक (Matric) पास करने के बाद कॉलेज के अलावा अरबी यूनिवर्सिटी में आलिमियत के पहले व दूसरे साल में आसानी से दाख़िला मिल जाता है। (5) यतीमख़ाना से मैट्रिक पास करने वाले यतीम तलबा का दाख़िला यतीमख़ाना के इनायत (I.T.I.) में बिल्कुल मुफ़्त (Free) है। उनसे किसी तरह का कोई ख़र्च नहीं लिया जाता है। पहले ही की तरह रहने-सहने और खाने-पीने की सारी सहूलियात दी जाती है। **अपील :** इस माद्दापरस्ताना (Materialistic) और जदीद दौर में दीनी व असरी उलूम के रिहाइशी (Residential) इदारों की पहले से कहीं ज़्यादा ज़रूरत है। • आप आसमान छूती महंगाई में इदारा की भरपूर माली मदद करें। तआवुन की मुख़्तलिफ़ शक्लें हैं जैसे • ज़कात • अतियात • सदकात वग़ैरा और इदारा के बाक़ी तालीमी व तामीरी मन्सूबों के लिए भी रुपये की बहुत ज़रूरत है। इदारा आपसे नन्हे-मुन्ने मासूम यतीम बच्चों को तालीम के साथ-साथ बाहुनर बनाने के लिए और उन्हें ऊंचा उठाने के लिए फ़राख़दिलाना माली तआवुन की अपील करता है।

नोट : इदारा की मुख़्तसर तारीख़ दस्तावेज़ी फ़िल्म (Documentary Film) नज़रे-इनायत (Nazr-e-Enayeth) यू-ट्यूब (You Tube) पर देखें।

चैक व ड्राफ़्ट और कोर बैंकिंग स्लिप पर सिर्फ़ यह लिखें : THE GAYA MUSLIM ORPHANAGAE

बराए राबिता चैक व ड्राफ़्ट और मनीऑर्डर भेजने का पता

Hon. Secretary, THE GAYA MUSLIM ORPHANAGE,
Cherki-824237, Distt. : Gaya (Bihar) India

Mobile : 9801213022, Whatsapp No. : 7258063440

Beneficiary Name
THE GAYA MUSLIM ORPHANAGE
Bank A/C No.: 300402010010581 (ज़कात/Zakath)
Bank A/C No.: 300402010002982 (डोनेशन/Donation)
Bank IFSC Code No: UBIN0530042
Bank: UNION BANK OF INDIA
(MAIN BRANCH GAYA)

Scan & Pay

याद रखें : बैंक में रक़म ट्रांसफ़र की तफ़्सील बराए-मेहरबानी स्कैन एंड पै पर (Scan & Pay) या किसी ज़रिये से रक़म ट्रांसफ़र के बाद स्क्रीन शॉट (Screen Shot) और नाम व पता ऊपर के व्हाट्सऐप नम्बर पर भेज दें ताकि रसीद भेजी जा सके।

इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ान (सदर)
9631867066

डॉक्टर जेड. एच. ख़ान
एज़ाज़ी सेक्रेट्री

E-mail : gmocde@yahoo.com.in
Website : www.gmogaya.in

पटना ब्रांच ऑफ़िस : पटना शहर के हमदर्द अपना चैक व ड्राफ़्ट और रक़म देने के लिए इनसे राबिता क़ायम करें।
जनाब ग़ुलाम मुहम्मद ख़ां (सदर) समनपूरा, पटना, मोबाइल : 9934943229
जनाब इंजीनियर मुहम्मद हसनैन ख़ां, समनपूरा, पटना, मोबाइल : 9631867066

दो घटनाएं एक सवाल

कोटद्वार में गणतंत्र दिवस के दिन एक मुस्लिम दुकानदार की दुकान के नाम को लेकर हुए विवाद के दौरान जिम ट्रेनर दीपक का भीड़ के सामने खड़े होकर दुकानदार का बचाव करना और उसके बाद उन्हें धमकियों व सामाजिक दबाव का सामना करना इस बात का उदाहरण बन गया कि मौजूदा माहौल में मानवीय साहस कितनी बड़ी क़ीमत मांग सकता है। दूसरी ओर मथुरा के एक प्राथमिक विद्यालय के हेडमास्टर जान मुहम्मद को बच्चों से नमाज़ पढ़वाने के आरोप में निलंबित किया जाना और बाद में जांच के दौरान सामने आए तथ्यों ने यह सवाल खड़ा किया कि क्या आरोपों के आधार पर तत्काल कार्रवाई करना न्यायसंगत है या फिर पहले निष्पक्ष जांच को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इन दोनों घटनाओं को सामने लाने में पत्रकार अजीत अंजुम की



ग्राउंड रिपोर्टिंग ने अहम भूमिका निभाई, जिसमें उन्होंने स्थानीय लोगों, प्रभावित व्यक्तियों और परिस्थितियों को सीधे दिखाकर पूरे घटनाक्रम को व्यापक संदर्भ में समझाने की कोशिश की।

इन दोनों घटनाओं ने सोशल मीडिया और जनचर्चा में व्यापक प्रतिक्रिया उत्पन्न की है, जहां एक ओर ध्रुवीकरण दिखाई देता है, वहीं दूसरी ओर निष्पक्ष जांच और सामाजिक सौहार्द की मांग भी मज़बूत होती दिख रही है। यह स्थिति संकेत देती है कि ऐसे मामलों में त्वरित प्रतिक्रियाओं की बजाय संवैधानिक मूल्यों, विधिक प्रक्रिया और मानवीय दृष्टिकोण को केंद्र में रखना समाज के दीर्घकालिक संतुलन के लिए अधिक आवश्यक है।

इन ख़बरों का व्यापक संदेश यह है कि समाज में पहचान और आस्था से जुड़े मुद्दे अक्सर भावनात्मक और राजनीतिक रंग ले लेते हैं, जिससे वास्तविक मानवीय पक्ष पीछे छूट जाता है। दीपक का साहस और जान मुहम्मद के मामले में सामने आई सामाजिक प्रतिक्रिया यह दर्शाती है कि समाज के भीतर संवेदनशीलता और पूर्वाग्रह दोनों समानांतर रूप से मौजूद हैं। ऐसे समय में आवश्यक है कि घटनाओं को केवल विवाद या सनसनी के रूप में न देखा जाए, बल्कि उन्हें सामाजिक आत्ममंथन के अवसर के रूप में समझा जाए, जहां संवाद, सहिष्णुता और न्यायपूर्ण दृष्टिकोण समाज को संतुलन और विश्वास की दिशा में आगे बढ़ा सके। ■■

क़ुरआन मानवता के लिए वरदान

❖डॉ. फ़रहत हुसैन

इस्लामी शिक्षाओं का मूल स्रोत पवित्र क़ुरआन है, जो पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) पर थोड़ा-थोड़ा करके 23 वर्ष में अवतरित किया गया और अपनी मूल भाषा में अक्षरशः सुरक्षित है। उसके अवतरण के समय से ही हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने उसे लिखवाना शुरू कर दिया था। आपके बाद पहले ख़लीफ़ा (शासक) हज़रत अबू-बक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) ने ग्रन्थ के रूप में प्रामाणिक प्रति तैयार कराकर सुरक्षित रखवा दी, फिर तीसरे ख़लीफ़ा हज़रत उसमान (रज़ि.) ने उसकी प्रतिलिपियां इस्लामी जगत् के सभी केन्द्रों को भेज दीं। उनमें से दो प्रतियां आज भी दुनिया में मौजूद हैं—एक ताशकन्द की लाइब्रेरी में और दूसरी इस्तम्बोल (तुर्की) के म्यूज़ियम में। इसके अलावा अनगिनत मुसलमान प्रारम्भिक काल से आज तक क़ुरआन को अक्षरशः ज़बानी याद करते हैं। प्रतिदिन नमाज़ में पढ़ने के अतिरिक्त रमज़ान के महीने में हर मस्जिद में पूरा क़ुरआन सुनाया जाता है। इस प्रकार लिखित व ज़बानी दोनों तरीक़ों से क़ुरआन की सुरक्षा का पूर्ण प्रबन्ध अल्लाह ने किया है। क़ुरआन अरबी भाषा में है जो जनसामान्य में प्रचलित है। दुनिया के करोड़ों लोग उसे समझते हैं। डेढ़ हज़ार साल से उसके व्याकरण व शब्द रचना में बदलाव नहीं आया। इसलिए उसके अर्थ और अभिप्राय को समझने में कोई कठिनाई नहीं है।

क़ुरआन की वर्णनशैली अद्भुत है, जिसे पढ़ते हुए दिल कह उठता है कि यह किसी इंसान की वाणी नहीं है। क़ुरआन का चमत्कार है कि मानवजीवन के प्रत्येक विषय पर विवेचना करते हुए भी उसमें कहीं कोई टकराव या विरोधाभास नहीं। पिछले डेढ़ हज़ार वर्षों में कितना कुछ बदल गया मगर उसके नियम व सिद्धान्त कभी ग़लत साबित नहीं हुए। अरब के रेगिस्तानी नागरिकों से लेकर बाद के अफ़्रीक़ी, एशियाई और यूरोपीय देशों और आज के प्रगतिशील समाज के मार्गदर्शन में क़ुरआनी सिद्धान्त कभी पीछे नहीं रहे।

हमें विश्वास है कि विश्व की वर्तमान जटिल समस्याओं



का समाधान भी क़ुरआनी मार्गदर्शन से ही सम्भव है। क़ुरआन वास्तव में ईश्वर की ओर से मानवजाति के लिए सर्वश्रेष्ठ उपहार है। यह किसी देश या जाति की सम्पत्ति नहीं, यह मानवता की साझी धरोहर है। ■■

विश्वनायक

जादू वह जो सर चढ़कर बोले । एक प्रतिष्ठित लेखक और विद्वान माइकल एच. हार्ट (Michael H. Hart) जब निष्पक्ष होकर ग़ौर करता है तो ईसाई होने के बावजूद अपनी पुस्तक 'The 100' में दुनिया की सौ प्रभावशाली हस्तियों में हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) को पहले नम्बर पर रखता है और पूरी ईमानदारी से स्वीकार करता है कि–

"He was the only man in history who was supremely successful on both religious and secular levels."

“इतिहास में वे (हज़रत मुहम्मद सल्ल.) एकमात्र व्यक्ति थे, जो धार्मिक और सांसारिक दोनों स्तरों पर सबसे अधिक सफल रहे।”

(An ISO 22000:2005 Certified Company)

OCEANS SECRET

INDIA'S LEADING CANNED FOOD BRAND

- TUNA
- SARDINES
- MACKEREL



www.oceanssecret.in | info@seahath.com | Follow Us: oceanssecret | SHOP ONLINE @ amazon

SEAHATH CANNING CO. Plot - 8, Margao Industrial Estate, Curtorim, GOA, INDIA - 403 709 **CUSTOMER CARE : 0832-2860412**

KANTI Monthly, New Delhi
March 2026
Posted on 20-21 February 2026
Published on 18 February 2026
Posted Delhi RMS Delhi-110006

RNI 53372/91
DL(S)-05/3147/2024-2026
LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
License No. U(SE)-73/2024-26
Total Pages with Cover: 52

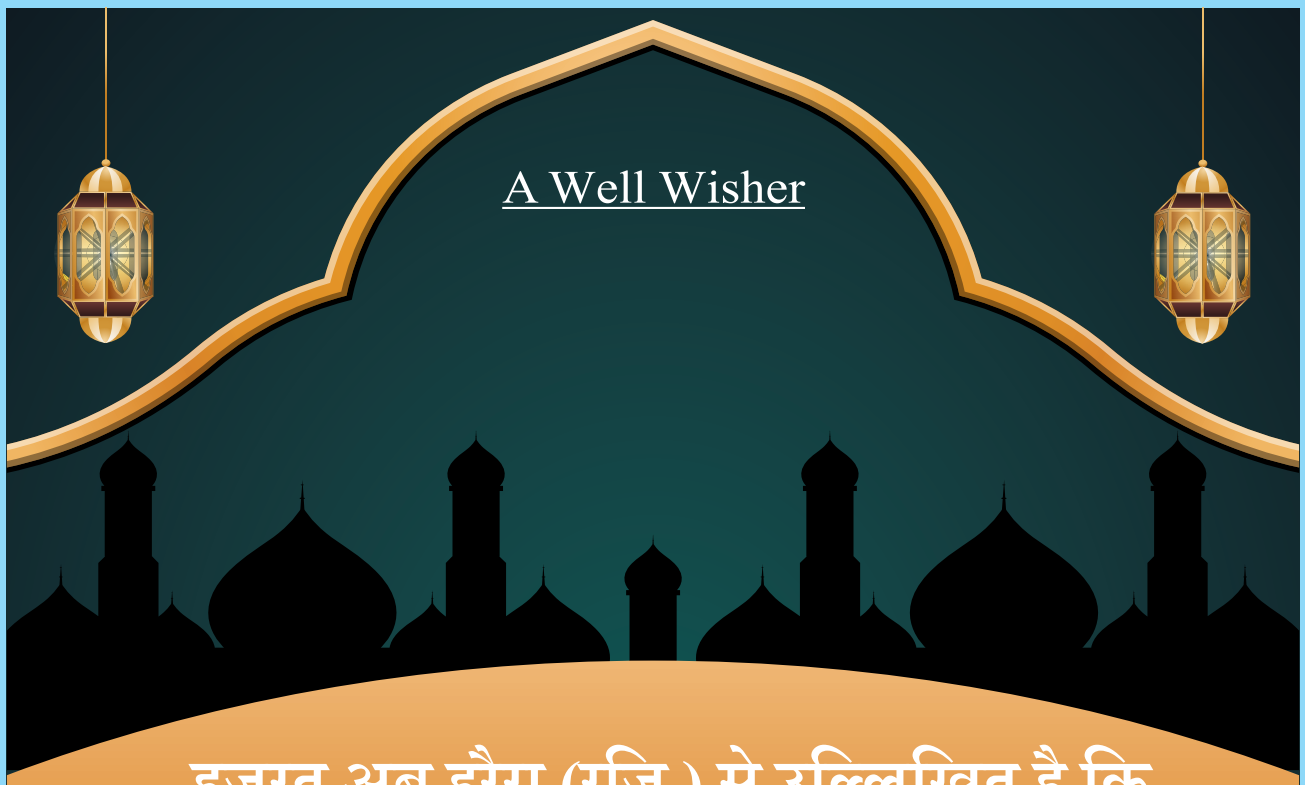

A Well Wisher

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि.) से उल्लिखित है कि
अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा :

कितने ही रोज़ेदार ऐसे हैं जिन्हें अपने रोज़े से भूख-प्यास के अतिरिक्त कुछ पल्ले नहीं पड़ता और कितने ही (रातों में नमाज़ में) खड़े होने वाले ऐसे हैं कि उन्हें (अल्लाह की सेवा में) अपने खड़े होने से रतजगे के अतिरिक्त कुछ पल्ले नहीं पड़ता ।

(हदीस : दारमी)

J. I. H. Vadodra
Gujrat